

प्रकाशक-शुभ मनुष्य वसिष्ठभाई, यहाँ हाउस-भगदासाद, •
 मुद्रक-शाह शांतिकान् दिगन्तान्, ना हरिहर त्रिदीग वरुम
 ग्राहिया पारगता-भगदासाद



(ज्ञानीयो के सुवर्णों का संग्रह)

— प्रकाशक —

भी जैन श्रद्धे. सुवर्णी पेढी
विपली यत्तारु इशेर सीटी (म मा.)

वीर नि म

भागमो २

विक्रम २३

२८८८

८

२०११

प्रथमावृत्ति



मूल्य

१००

१

१ रुपया



आर्थिक सहायक

५०१ जेठ आर्दानजी जमनालालजी राजनादगाँ (C. P.)

७५१ जेठ जेशिंगमाई कालीदाम दृष्ट

हस्ते माराभाई जेशिंगमाई, मनुमाई जेशिंगमाई

व्हाइट हाउस, अमदावाद.

चित्रों की अनुक्रमणिका

१ नवकार महामन	१	६ आ हीर विजय मूरि	
२ जल की वृद्धम	२२	और समाप्त अकरा	७०
विराट् विश्व	३४	७ महामाहण	६०
३ मधु विंदु	३८	८ महानिर्यामक	७३
४ पटम—अगुका चित्र	४२	९ महासार्थवाह	
५ महागोप	५७	१० अष्टदश कमल नवकार	८१
		११ नरभर नगर	
		सोहामण्ड	१२४



प्रकाशक की ओर से—

हृदय को बान है कि राधास्वामिपुत्र स श्रुत ज्ञान का परम ज्ञानि
पहुचानेवाले निम्न जातया के सद्गुरु का के मुंदर - २० स्वस्व प्रस्तुत
पुस्तक का प्रकाशित करने का हम सोचा है निम्न है

१. श्रीमान्दण्ड आगमसभाट् ध्यायस्थगर्वात् आचार्यदेव श्री
आनंदमागरगुरीश्वरजी म श्री क शिष्यरत्न श्री सिद्धचक्रागधन
तथोदात्तक पू आ. श्री चक्रमागरगुरीश्वरजी के परम विषय सरो
मुनि पू मुनि श्री चर्ममागरजी म गणिराय श्री ममेन रिखाजी
आदि पूर्व दण क महान् नाओं का यात्रा कर क पू पा देहला,
जयपुर, जयमेर जोधपुर होत हुए मारवाड की ऊँची पर्वतों की यात्रा
कर क रि = २०१३ क ज्येष्ठ मास म आरू पधारे थे, उस समय
मदिग की नवसि पर अर्चनमया करनेवाला पंडित दूर दूर गज
स्थान भागसभा म पेश होनेवाला था, उस क विराम में सक्रिय
आ देगन ठग क दुम उदे य से रात्रिस्थान जन सघ की गिरोही
में बैठक थी, उसमें हुए विविध के अनुसार सम्मान्य बाग-दाय भ्यति
गिरोही म पू मद्रागन श्री को चातुमान विसावमान दोन वास्त आरू
गिरोही म आये, अहमदाबाद बाग क - बागद रहते म विसेरी
म चातुम म २५।

चातुमास में अनेक शिक्षित नवयुवक आदि धर्म प्रेमी जनता न्याख्यान श्रवण आदि का स्खलन लाभ उठाती थी, श्रीभगवती सूत्र और जैन रामायण की मनोहर देशना से शिरोही की धर्म प्रेमी जनता स्खलन प्रसन्न हुई थी।

उस प्रसंग पर रोज बड़े बोर्ड पर विभिन्न सदुपदेशों मकर मन्त्रचन लिखे जाते थे, और उनका पुस्तकार मन्त्रचन करने का शुभ प्रयास चातुमास में बदनाय आये हुए राजनादगौर (C. P.) बाड़े शेठ आईदानजी जयनालालजी ने प्रकट किये हुए ५०१ रुपया देने के शुभ मन्त्रचन से हुआ उनका गुणभक्ति और ज्ञानभक्ति सराहनाय है।

इस पुस्तक का प्रकाशन मुद्रा और अनेक चित्रों से समृद्ध जो हो सका है, उस में मुख्य निमित्तरूप शेठ श्रीमनुमाई जेजिंगभाई (व्हाइट हाउस—अमदावाद ७) ने रस ले कर ज्ञान समृद्ध पुस्तक जनता के हाथों में पहुँचाने का भावना व्यक्त की, तदनुसार उन्होंने अपने पिताजी के पुण्य स्मरणार्थ बनाये हुए शेठ श्री जेजिंगभाई फालीदाम ट्रस्ट में से ७५० रुपये दान की उदार भावना प्रदर्शित की।

इन श्री जैन धर्म के साहित्य प्रति आन्तरिक जो अभिरुचि है, वह बहुत ही अनुमोदनीय है।

इस पुस्तक के मुद्रण के कार्य में सहिय प्रेमी पू मुनिराजश्री
निरजनरिजयजी म ने प्राग्भिक सुविधा बहुत दिलचस्पी के साथ
कर दी, अतः हम उन के आभारी हैं

इसी प्रकार हम पुस्तक को बड़ी उमर के साथ रात और दिन
एक सा परिश्रम करके बड़ा स्फूर्ति और होशियारी के साथ सज-धज
के छापने में श्री हरिहर मि-टींग वर्कूप के मैनेजर श्रीमन्लाल
भाईलाल शाह के संप्रयन की भूरि-भूरि प्रशंसा-अनुमोदना के
साथ उन्हें बार-बार धन्यवाद दिया जाता है

गन्ती हो जाना स्वभाविक है हम चीज की आदम हम अपना
समर्थ क्षणियों को छिपाने का दुस्माहस करना उचित प्रतीत नहीं
होता कि भी भविष्य में ग्याल रहे इस लिए अपनी गन्तीयों का
जानना तो आवश्यक है ही, और इस दृष्टि से प्रस्तुत पुस्तक में
समादन-प्रकाशन या शुद्धि मंत्री रहा। इस दृष्टियों के वास्ते श्री
मकड मधका सेवाम मिथ्यादुष्ट देते हैं

वीर नि स २४८२
वि म २०१४
वे सु १ गविवार

श्री
श्री जैन भवे सध की पेटी
पिपली बजार
डदौर सीटी
(म भा)

संपादकीय वक्तव्य

वर्तमान युगमें जगत् प्रहार की पुनरुत्पत्ति प्रकाशित होती है, परंतु युग की परावर्तनाशाय प्रक्रिया के गन्त बहारा में आकर बहुत सी पुस्तक विचारकता एवं सम्यग्दर्श का लट्ट को नितर-नितर करनवाली हो कर फटत जगत् के ज्ञान मूढ प्राणीयों को जीवनशुद्धि के कार्य में उत पुस्तकों से सहयोग नहीं मिलता है।

अत एव कुछ प्रौढ विचारशील वर्तमान-युग की मार्मिक परिभाषा बताते हुए स्पष्टीकृत और मनामस का अमर-द परिस्थिति का सर्जन करनेवाले अर्धपरा-अपार एवं रिक्त विचारधारा के उत्तेजक प्रकाशनों का युग कह कर जीवनशुद्धि के भवस्थान रूप वर्तमान-युगको बनाया है।

आज के समय में आवश्यकता है उस साहित्य की जिसे की पढ कर विचार एवं कर्तव्यों की मम वयामक मूमिका आसानी से बनाई जा सके,

इसी उद्देश्य को लेकर प्रस्तुत पुस्तक का संपादन किया है।

ज्ञानीयों के वचना को तथा अनुमनपूर्ण तथ्यों को अपनी योग्यता और हैसियत के अनुसार समझ कर जीवन के साथ एकरूप बनाने के पवित्र कार्य में ऐसी पुस्तकें विभिन्न प्रकार से मुमुक्षुओं को सहायक होती हैं।

प्रस्तुत पुस्तक का नया निमाण नहीं है, स्वयं भौतिक रचना नहीं है प्रस्तुत पुस्तक में नानीया कवचा का यथामति - छन्द है

भौतिकवाद-प्रधान वर्तमान-युग में लोग का वृत्ति-रुचि रात्रि अपका और रूप-रंग की नाप अति है, पर । सच मुच में मोटह शिगार मज कर विविध नगर करती हुद पे या की अपक्षा सीधा और सात पदिर-निर्मठ वय पहनी हुद पतिवता श्री की महत्ता को मनवा का सप्रयन मुन पाठक करे

मेरी मानुभाषा हीन होन क कारण शब्दप्रयोग में व्याकरण या वाक्यरचना न्यधी न्यूनताये -भविन है, एवं अनक कार्यों की व्यमता और छि-दोष के कारण मुद्रणदाप भी नायद है, इन सब क वास्ते मुजम-चों से हस-क्षार न्यायानुमार पढ़न की प्रार्थना के साथ गन्तीयो क दिये प्रिकरण योग में मिध्याकृत देता ह

बीर नि म २४८४
दि म २०१४
वैशाख सुद १

जी
श्रमण मध मवक
५ श्री धर्ममागर गजिर
चरणोगमक
मुनि अमयमागर

अनुक्रमणिका

शांति का सम्पन्न	१	महापुरुष का जन्म	२६
संस्कारों का बल	२	मुन्नीपथिप्राक द्वाद	२७
माया रसायन	३	, , रदस्य	२९
भग्नर अज्ञान	४	धर्म या व्यापार ?	३०
पाप क्या क्या ?	५	सुखी आशादी	३१
जिन शासन की आराधना	६	द्रष्टृ अमरन का सदन	३२
जरा मोक्ष हो !	७	भग्नर अज्ञान	३३
मानव जीवन का महत्त्व	८	मिट्टि में विराट्	३४
शास्त्र धरण	९	संसार में सुख कहाँ ?	३५
जागते रहो ! ! !	१०	ध्यान कुरु की महत्ता	४०
जीवन्मुक्त का संवा क्या ?	११	, , दुर्लभ क्यों ?	४१
, , का आत्म	१२	सप का महत्त्व	४२
विवेक बुद्ध	१३	अणुर्म विराट्	४३
अपन आप का पदचानो ! ! !	१४	जरा साक्षर हो !	४४
माया दंड का मूल्य	१५	अकलित है कि	४५
क्या यह उचित है ?	१६	ज्ञान किन्ना ? और कैसा ?	४६
जाग्रत परंपरा का		समभाव का उपाय	४७
इतिहास (१)	१७	मोक्ष की इच्छा	४८
, , (२)	१८	मुक्ति की इच्छा क्यों ?	४९
हितकर मार्ग दर्शन	१९	विवेक दृष्टि	५०
महामाण्डूय श्री नमस्कार		संसार का सुख कहाँ ?	५१
महामन्त्र महिमा	२०	सुख या दुःख ?	५२
(स्तवन)		पराधराज का शासन	५३
, ,	२१	करामाती पत्र	५४

जगन् कै लक्षणहार का रहस्य न	५९	" , (१०)	८९
विवेक का प्रतीक	२१	" , , (११)	८९
समस्तदास का नमूना	११	" , (१२)	८९
छाते-मानद देने की रीति	६२	सत्त प्रथम की शुद्धि	८९
लोकेश्वर महापुरुष की	६४	मदा याद रखो (१२)	९१
पदचरन		विवेक शुद्धि	९१
क्षमापना का महत्त्व	६४	धन क्या रीति हो	९३
पराधिराज की स्मृति	६५	क्या हो तो क्या करना (१)	९३
रघुनाथ का महत्त्व	६५	" , " (२)	९३
सदा याद रखो (१)	६७	" , , (३)	९३
अमरगुरु का स्वगतिवि	६८	नारायणधना का महत्त्व	९३
आधुनिक शिक्षण	७१	आ अरिस्त पद महिमा	१००
मदा याद रखो (२)	७२	श्री गुरु , ,	१००
" (३)	७३	श्री आनाय	१००
सीपकों का उपकार	७३	आ उपन्यास ,	१००
विद्वत् पुरुष	७५	आ माधु " ,	१००
सदा याद रखो (४)	७६	आ दान , ,	१००
धर्मद्विधा क्यों? और कैसे?	७७	श्री ज्ञान , ,	१००
आध्यात्मिक समाज	७८	आ चरित्र " ,	१००
श्री नमस्कृत महामन्त्र का		श्री तप	१११
लाभ क्यों? और कैसे?	८०	श्री नवपद का आराधना	
सदा याद रखो (५)	८२	का रहस्य	१११
" , (६)	८३	दान धन क्यों? और कैसे?	१११
" " (७)	८४	होद-प्रदाय ,	१११
" , (८)	८५	नपम्दा बैगा का गाय?	१११
" , (९)	८६	मायना से मुक्ति का	



॥ श्री नमस्कार-महामन्त्राय नमः ॥



(ज्ञानीयों के सदुपदेशों का सफलन)

(जि सं २०१३ (चैत्र) में पू० तपस्वी मुनिलाल श्री धर्मनागरजी म. गणिवर्यश्री ने ७ साधु के साथ शिरोही (राजस्थान) में चातुर्मास किया और अर्यगंभीर श्री भगवती सून एवं जैन रामायण की रोचक देशना दी, उस प्रसंग पर रोज स्टेकबोर्ड पर दैनिक मुद्रिचार लिखे जाने थे, उसका यह रोचक सप्रह है)

शांति से जरा पढ़िये तो !!!



जाये मा करदम पर,

सुद हेच नाबोना न रटें ।

दर्मियाने खाना गुप कर देय,

साहिव गाना ॥

भावार्थ—तो कुछ हम अपना माव लिया है, (चैता न शायद) कोद जग मा अपने माध न करगा (यदि पर न अंदर रहते हुए मा घर के स्वामी को । हम) गुम लिये बैठ है

—कारमी मृमापित

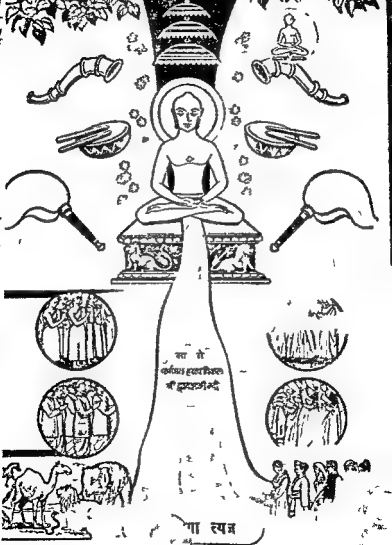
बुद्धेश्वर ' रवदा की पावणा ?

इष्ट पट से उये लायगा ॥

भाषार्थ—मा को मंवार से हटाकर आमा के तप लगाने से ही प्रभु प्राप्ति होती है ।

—पनाय के ब्रह्मजानी मत मुल्लशद

ज्ञानपा



॥ श्री गङ्गेधर-पञ्चनाशाय नमः ॥

॥ नमोऽस्तु धामनपतये श्रीवद्भक्तानन्दामिते ॥



ज्ञानगंगा



(हितकर सुवचनों का सुमधुर संग्रह)

卐 शान्ति का राजपथ

आधुनिक वैज्ञानिक-युगमें प्रगति एवं सुविधा के नाम पर इन्द्रियों की वृत्तियाँ को भटका देनेवाले कर अनर्थकारी साधन निन्दने-रातचौगुने बढ़ते जा रहे हैं ।

ऐसे मौके पर सच्ची निष्ठा एवं पवित्र भावना के साथ ज्ञानीयों के बताये मार्ग को समझ कर तदनुसार जीवन को सुसंयमित बनाना चिरस्थायी शान्ति के राजपथ का अधिक बनने के लिए जरूरी है

—अपाठ सुद १४

रे जीव ! सुन तुं बापड़ा !, दिये बिमासी भोय ।

आप स्वास्थ्य सद् मर्त्यु, ताहर नहीं जग कोय ॥

卐 संस्कारों का बल

निर्मल वस्तु के ससर्ग से निर्मलता का अनुभव सहज ही नहीं होता है, उसके लिए कुछ विशेष प्रयत्न की अपेक्षा रहती है, परन्तु मलिन वस्तु के तो स्पर्श मात्र से ही मलिन वस्त्र प्रत्यक्ष अनुभवमें आती हैं, क्योंकि अशुभ संस्कारों की प्रबलता होने से अशुभ अभ्यास सहज ही हो जाता है, शुभ संस्कार सहसा नहीं पड़ते हैं, जैसे कि रुपये पर दाग लगनेमें देर नहीं लगती है, देर लगती है दागको मिटानेमें, उसके लिए खर्च तथा परिश्रम भी विशेष करना पड़ता है, इतने पर भी संभव है कि दाग सर्वथा साफ न हो, थोड़ा-बहुत धब्बा रह ही जायें

इस तरह अपने जीवनमें अशुभ संस्कारों का बल हमेशा बना-बग़ाय रहता है, अतः निवेकदृष्टि से अशुभ संस्कारों का बल कम करने का मार्ग लेना चाहिए

—अष्टाद सूत्र १५

卐 भावना-रसायण

अनादिकालिन मिथ्यावादि के रोग को जड़-मूल से हटाने के लिए और आत्माके ज्ञानादि-गुणोंका पोषण करने के लिए चार भावनाओंका रसायण ज्ञानी भगवत्ोंने बताया है

धर्म विना सुण जीमडा ! तु ममीओ भव अनत ।
मृदपणे भव ते कीया, ईम बोले भगवत् ॥

मैत्री-प्राणी-मात्र के कन्याण की भावना
 ममोद-गुण और गुणीओं के प्रति आदर-भाव
 कष्टना-दुःखीओं के दुःख दूर करने की तत्परता
 माध्यस्थ्य-उपदेश-हितशिक्षा न माननवाले एवं
 दुष्टादि प्रति उपेक्षा-वृत्ति
 -भा० क० १

卐 भयकर अज्ञान

जिस शरीर के सपनेमें आरुण पवित्र एवं सुंदर दिखने
 वाले कस्तूरी, चंदन, फूल, मिठाई, नये गहन एवं कपड़े आदि
 भोगोपभोग के मनमोहक साधन अपवित्र एवं दुर्गन्धमय बन
 जाते हैं, ऐसा अपवित्रता के गन्धाने समान भयकर अशुचिपूर्ण
 इस शरीर को नहाने-धोने द्वारा स्वच्छ एवं साफ-सुधरा करने-
 रखने की वे-समसदारी की प्रवृत्ति करते रहना और इनके नाम
 पर भ्रम-कन्याण, समय-साधन आदि के स्वर्ण-जवहर
 को प्रमादवश गँवाते रहना भयकर अज्ञान-दर्श का नमूना है
 अतः शरीर का मोह कम करते हुए जीवन-शुद्धिक काममें
 लगे रहना जरूरी है

-भा० क० २

कुण आपणो! कुण पारको!, कुण वेरी! कुण मित्त!!
 राग-द्वेष टाळी करी, घर समता एकचित्त॥

卐 पाप पुरा क्यों?

पाप करते समय उसे त्रिषान का वृत्ति बनी रहती है और पाप करने पर भी खुद को पापी के रूपमें ससार पहचाने यह डट नग्यो होता है

इससे यह पलित होता है कि—यथार्थता के दृष्टिकोण से पाप पुरी चीज है, तभी तो उसने करते समय उसे गुप्त रखने की वृत्ति होती है

फिर भी अनादिकात्मि अशुभ—संस्कारों के दबाव से आंतरिक—ज्ञान का प्रकाश इस चीज को स्पष्ट नहीं कर सकता है,

अतः धर्म की आराधना के बल पर शुभ—संस्कारों के बल को बढ़ा कर पुराने कुसंस्कारों की छाया को जीवन से हटाने का सप्रयत्न करना चाहिए

—श्री० क० ३

卐 जिन-शासन की आराधना

वीतराग के शासन का मतलब ही यह होता है कि —

“राग-द्वेष एवं मोह के विषम संस्कारों पर विजय पाने के लिए यथोचित रूप में वृत्तियों का सुसंयम करना ”

नव-नवा नाटक तू बली, नाच्यो करी बहुत रूप ।

नाटक एक न नाचीयो, जिणसु छूटे भव कूप ॥

इस प्रकार जाना-बूझ के बताये हुए दृगम धर्म आराधना के फल-स्वरूप विवेक, सत्ताचार एवं मयमक बल पर ज्ञान की वास्तविक शुद्धि होती है।

इस मापन-यंत्र के द्वारा हरदम अपनी धर्मक्रियाओं का अंतरात्मा स्वरूप सूक्ष्मशुद्धि से जाँचते रहना चाहिए।

—श्रा० १०० ४

॥ जरा सोचिए तो !!!

* अगाध समुद्रमें गूँम हुई चीज भाग्यवश प्रयत्न के बल पर पुनः पाई जा सक, पर 'प्रमादवश' यथै गुमाया हुआ मनुष्यमय पुनः प्राप्त किया जा सकता है क्या ?

* कौड़ा मण के बचन का बड़ी भारी कपाया का गिला के नीचे दबे हुए आत्मा की मुक्ति के लिए युक्ति और बल ढाला लगा-कर अंतरात्मभाव को बढ़ाते रहने के बदले नानाविध भोगोपभोगों का साधना स फमा के बचन में उसे विशेष छद्मता से जकड़ देने का प्रवृत्ति करते रहना उचित है क्या ?

* गुणगान् महापुरुषों के प्रति यथार्थ राग-आदर या बहुमान पैदा किये बिना आत्मकल्याणसिद्धि का राजमार्ग कभी हस्तगत हो सकता है क्या ?

—श्रा० १०० ५

उत्तम कुल नरमय लही, पाम्यो धर्म जिनसाय ।

प्रमाद लही सेरीये, धण लासेथो जाय ॥

॥ मानव-जीवन का महत्त्व

जीवन को आदर्श प्रगति के सच्चे मार्ग पर ले जाने में अत्यंत उपयोगी सद्बिचार एवं सत्तत्त्वाचार रूप आचार्यश्रुत दो साधनों का संपन्न संयोग फल मनुष्य-भव में है। विवेकी प्राणी को प्राप्त होता है।

व्यावहारिक दृष्टि से पौद्गलिक भोग-सामग्री की विपुल प्राप्ति देवभव में भा हाती है, और मानव-भव में तो पौद्गलिक सामग्री यथोचित मिलने का कोई नियम भी नहीं है।

फिर भी शाला में मानव-जन्म का जो महिमा है, वह हमी चीज को ले कर कि—“मनुष्य-भव में जीवन का मौलिक नव-सर्जन विवेक के बल पर सुशक्य है”।

अतः “जीवन को सुसंस्कारित बनाना” या अविवेक-मूलक विषय-भोगों के पीछे लगे रह कर जीवनशक्ति का अप-यय करना” इन दोनों में से किसी एक मार्ग का अवलंबन करने-न करने का जागृत मान-हर बुद्धिमान् को पालेना जरूरी है।

यह जागृति निष्कारण-करुणा-रस के भंडार शालाकारों के हितकर वचनों का विवेक-पूर्वक श्रवण करने से पैदा होती है।

अतः चातुमास के पवित्र दिनों में गुरु-मुख से शीर्थकरो की बाणी सुनने का स्वर्ण-अवसर का लाभ प्रमादवश चूकना न चाहिए।

—आ० कृ० ६

जिसु कीजे तिसुं पाईए, करे तैसा फल होय ।

सुख-दुख आप कमाईए, दोष न दीजे कोय ॥

५ शास्त्रधरण

जीवन में नाना प्रकार के गम द्वेष एवं अज्ञान के त्रिषम मस्कारों के कारण हरदम अशांति बनी रहती है, अतः विवेकपूर्वक महापुरुषों के आदर्श एवं उदात्त जीवन के रहस्य को समझानेवाले शास्त्रों का ध्रुवण करना जरूरी है।

शास्त्र-धरण चाहे किसी लोभ या लालच से भी प्राप्त हो जाय तो भी उससे ससार के त्रिषम वातावरण से छूटने का बल सदन में प्राप्त हो जाता है, जैसे कि — नोटिया साँप के साथ लड़ते समय साँप के जहर से व्याकुल बनन पर झट से दौड़ा हुआ नागदमना की बूटी को सूँघ कर स्थस्थ बनकर, खूब साऊत के साथ बड़े भयंकर साँप को भी खत्म कर देता है, इसी तरह ससार के ग्वतरनाक परिणामों के जहर को शास्त्र-धरण के द्वारा विवेकी श्रोता हटा कर जीवन को पवित्र बना लेता है।

अतः जीवन को सुख-शांति के मार्ग पर ले जाने के लिये और सब कामों को छोड़ कर के भी शास्त्रकार-भगवतोंने अपार कठुणा से प्रेरित हो कर अज्ञानी जीवों के उद्धार का कार्य स-मार्ग का उपदेश दे कर जो किया है, उसे विवेकी श्रोताओं ने जल्द सफल बनाना चाहिए।

—पा० कृ० ७

बावी कुरी कोदरी, तो क्या लणीए छाल ?
पुण्य बिना सरी जीवदा ! आशा आलपपाल ॥

जागते रहो !!!

इस ससार में भयंकर दुःख भी जितना अनर्थ नहीं कर सकता है, उससे भी ज्यादा अनर्थ घृत्नीति के प्रयोग द्वारा अपनी स्वार्थ-साधना में चतुर एवं विध्वंसकारी, हित-घु-व्यरूप धोखेबाज मित्र अपने को स्वेच्छापूर्वक अनर्थों के अवे कुँजमें उतार के करते हैं।

जगत के इस सनातन नियम को निवेकपूर्वक विचारने पर स्पष्ट प्रतीत होता है कि —

“(पापानुरंधी) पाप के उदय का अपेक्षा (पापानुरंधी) पुण्य का उदय विशेष अनर्थकारी है क्योंकि —उग के द्वारा मिलनेवाले जगत के पदार्थ आत्मा को अतिरिक्त कर्मों के बंधन में फसा देते हैं।”

अतः पुण्य के उदयसे मिलनेवाले पदार्थों के भोग की तत्परता से अपनी निवेकनुद्धि मलिन होने ७ पावे इसके लिये सदा जागते रहो ! जागते रहो !! जागते रहो !!!

—आ० क० ८ (९ का क्षय)

धीतराग की सेवा क्यों ?

धनराग और फिर उसकी सेवा यह तो एक बेमेल का बात मादम होती है जिसकी सेवा करने से अनुग्रह-महेरबानी होने का समव नहीं, क्योंकि —रागवृत्ति ही जिनकी

आयु पदोंव्ये आत्मा, को नवि राखणहार ।

इन्द्र चन्द्र जिनवर वली, गया सवि निराधार ॥

[illegible]

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

१०७ ॥ १०८ ॥ १०९ ॥ ११० ॥ १११ ॥ ११२ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥ ११७ ॥ ११८ ॥ ११९ ॥ १२० ॥ १२१ ॥ १२२ ॥ १२३ ॥ १२४ ॥ १२५ ॥ १२६ ॥ १२७ ॥ १२८ ॥ १२९ ॥ १३० ॥ १३१ ॥ १३२ ॥ १३३ ॥ १३४ ॥ १३५ ॥ १३६ ॥ १३७ ॥ १३८ ॥ १३९ ॥ १४० ॥ १४१ ॥ १४२ ॥ १४३ ॥ १४४ ॥ १४५ ॥ १४६ ॥ १४७ ॥ १४८ ॥ १४९ ॥ १५० ॥ १५१ ॥ १५२ ॥ १५३ ॥ १५४ ॥ १५५ ॥ १५६ ॥ १५७ ॥ १५८ ॥ १५९ ॥ १६० ॥ १६१ ॥ १६२ ॥ १६३ ॥ १६४ ॥ १६५ ॥ १६६ ॥ १६७ ॥ १६८ ॥ १६९ ॥ १७० ॥ १७१ ॥ १७२ ॥ १७३ ॥ १७४ ॥ १७५ ॥ १७६ ॥ १७७ ॥ १७८ ॥ १७९ ॥ १८० ॥ १८१ ॥ १८२ ॥ १८३ ॥ १८४ ॥ १८५ ॥ १८६ ॥ १८७ ॥ १८८ ॥ १८९ ॥ १९० ॥ १९१ ॥ १९२ ॥ १९३ ॥ १९४ ॥ १९५ ॥ १९६ ॥ १९७ ॥ १९८ ॥ १९९ ॥ २०० ॥

[illegible]

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥

[illegible]

आर-नाम्प रिणार १, १०: दोग दिदरे गा।

स्वामी देवकी कीर्तिषु निज गोपे नमः ॥

अतः 'वीतरागकी आज्ञा उठाने की तत्परता ही वीतराग की सेवा है, बाह्य-विनय में उन्हें प्रमत्त कर्म का विचार हो सवा क परमार्थ का अज्ञान सूचित करता है।

अतः सपूर्ण-रूप से क्रोधादि-भावजंतुओं का त्याग करके आत्मकल्याण के शुद्ध मार्ग का राह जिन्होंने निश्चय-भावसे जगत के सामने उपस्थित किया है, वैसे अनन्त-उपकारी वीतराग परमात्मा की हूँ-उनकी आज्ञा के पालन-स्वरूप-सेवा करना आवश्यक है।

—आ० क० १०

वीतराग की सेवा की आदर्श

किसीकी सेवा करने के पीछे उससे कुछ होंसिल-कर्म का आशय मुख्य होता है, पर गगन-द्रव्य के सरकारों से रोहित शुद्ध-निर्जल-निर्विकार परमात्मा बन कर सपूर्ण वीतराग-दशा के उच्च सिंहासन पर विराजोपाठ श्री तीर्थकर-परमात्मा की सेवा-उपासना अपने जीवनमें क्या लाभ दे सकती है ? यह प्रश्न वीतरागकी पूना-उपासना करके जीना की शुद्ध उन्नति का शुभ-प्रयत्न करोनाके मुमुक्षुओं को समझना अत्यंत जरूरी है।

य मारक अथ धर्मों की मायता के आधार से तो 'प्रसू-परमात्मा जगत के समस्त व्यवहारों के नियता होने के कारण' पर विना क्या ज्ञान समाशा ? लूण विन मोजन का खाना । आत्म-ज्ञान विना तेम जानो, जगमे सघटे अधियारी ॥

उनकी सेवा घडा-चटुन भी स्वार्थमिदिका जान न मकनी है, परन्तु राग देवकी भावनाम निमित्त मन्त्रज्ञाने र्वतगा-दयकी सेवा म माग क स्वार्थे की वृत्ति म तो प्रममर्थ है न, माथ ही भाव क-याग क मार्ग मे हाथ पकड़ कर म मागम पाग न उताग क कारण बीतराग दस्तो सेवा रा आइये जागा वरही है ।

घट यद है वि

"अपना दू। आम-निय। का यथार्थ भाग ही का मन्त्र पुग्वागु क माग पर बीतराग नगाम-निय। को मगा दना ही घातगाग की सेवा का यथार्थ भाग है ।" यथा कि उ दान अवन जीवन क प्रक्रियायक टागमम म जगन क मानन अर्चुन तथ्य उपस्थित किया है-कि "आम-निय। क अवयव एवं यथार्थ जानकारी न हान क कारण मगूट मन्त्राना यमम मन्त्र भी दान-हीन दगागमी न गामे जगन क बीत वगायी क तरग-यथ गौड-धूप मन्त्र का पारनमें नगा की भाग अपन ही हाथ म मन्त्र है ।"

अन विरहयुक्त अलग म-मन्त्र को पाकर अवन रातिवा का योग्य निगम लगान का मन्त्र बीतराग का सेवा दूग सिध करना सहज है

—भा० ७० ११

उन्म घरी आ जगतपा, मेळवीओ श्री सार ।

हृदय रिचारी नाप नु, कर तु आत्म मार ॥

५ विवेक-बुद्धि

संसार के तमाम पदार्थों द्वारा लाभ और हानि प्राप्त हो सकती है, क्या कि पदार्थों का उपयोग समनवाग जिम दमसे नाम लता है उसीके आधार पर अन्त या चुरा परिणाम पाया जाता है।

अतएव बुद्धिजाडमान सामान्यतः हिंस्र नीज को पदार्थ रूप से अच्छी या चुरा गही मतगत है, अतएव! खुल बुद्धिवाड बालनीवा को व्यवहार-गमिका बनाये रखते बास्ते दूड पदार्थों को सर्वश्रेष्ठ णव अनिष्ट बताये हैं।

वस्तुतः उपयोग करनेवाले की खुदरी विवेक-शक्ति के आधार पर चुरे पदार्थों द्वारा भी उत्तम लाभ प्राप्त कर लेने का अदभुत फल प्राप्त हो सकता है, अन्यथा उत्तम पदार्थों के लाभ से भी वंचित होना पडता है।

अतः धर्म की आराधना के मार्ग पर चउनेवाड महापुरुषों को चाहिए कि वे अपना क्रिया के आचरणमे विवेक का गैर-हानर से जीवन को निगाडनवाग रागादि विकारों से दूषितता पैदा हान व पाव इसका पूरा ख्याल रखें।

भा० कृ० १२

जब तेरा जगम जन्म हुआ, जग हूँगे तूमे रोय ।
अब करणी पेमी करो, तूमे हूँसे जग रोय ॥

॥ अपने आपको पहचानो ॥

विश्व के हर प्राणी की मानसिक भावनामें वास्तविक सुख-
शान्ति की सृष्टि हरम्भ हो रही है जब च जे पाने कठिन हो
सब प्राणी दिन-रात उन्मुक्त होते रहते हैं ।

परन्तु किसी चीज को पाने का अमल लगता है कि —
जिस चीज को पाना चाहते हैं, उसके अमली कारणों का यथार्थ
ज्ञान पहले करना चाहिए, बादमें गुण की प्रशिक्षण का ठीक ढंग
से उही यथार्थ कारणों के साथ सम्बन्ध करके हुए पूर्ण विश्वास के
साथ काम करना चाहिए ।

नसल प्राणियों के जीवन-चक्रमें इन दोनों बातों की
बुद्धि रहती है, अतएव हरम्भ जिस-सुख शान्ति को चाहता
होता रहता है, उस चीजसे अपना आपको काम-दूर हो जाता है ।

जगत के पदार्थों में वास्तविक सुख-शान्ति है या नहीं ? इस
चीज का विशिष्ट प्रश्न होना जरूर है ।

विचारक प्राणीओं का महान अनुभव हम चीजों का प्रमाणित
करता है कि —

"अविशेषण एव मोह के कारण अज्ञान। प्राणी जीवन से सम्बन्ध
रखनेवाले ज्ञान-विशेषण एव समय को भूल कर वासना के प्रवाह

मूर्ख जाणे भुन विना, चाले नहीं व्यवहार ।

गये बुद्धिधर-राम-नल, फिर भी चले संसार ॥

में काम कर ट-अर्था की तुलना में ही मृग की कल्पना कर देता है, अमन-चीन की कल्पना में ही जीवाका श्रेय मान जाता है।"

अतः रडा जाना है कि - -

"अपने आपको पहचानो" याने कर्त्तव्यका भाव पैदा करो"

आ० व० १३

॥ मानव-देहका मूल्य

जगत के सब प्राणीमा में मनुष्य को सर्व-श्रेष्ठ माना जाता है, किन्तु—मानव बुद्धि एवं विवेक की संपत्ति अन्य प्राणियों का अपेक्षा अधिक पाई है।

परंतु किसी उत्तम चीज के मात्र मालिक बन जाने से जीवन में उस चीज का स्वार्थ लाभ प्राप्त नहीं होता है, परंतु मित्र हुई चीज का सदुपयोग ही जीवन का उन्नत बनाना है, मानवदेह का प्राप्ति भी इसी पैमाने से सफल होती है, अन्यथा पशुमा से मा अधम-रूपा में मानव पहुँच जाता है।

मानवदेह के द्वारा जीवन के मा उन्नतिशील एवं प्रगतिमय बन जाता है जिससे कि अपना व अपना समागम मा मानवार्थे तमाम प्राणीमा का जीवन परम उत्तम रूप बन जाता है।

यदि इस मूल्य को मानव भूल जाता है तो वास्तविकता के नाते मानव समाज का दृष्टि से बहुत नीचे गिर जाता है, प्रयुक्त

अधिकार पामी जगतमा, करे न पर उपकार।

अधिकारमार्थी 'अ' गयो, पाछळ रथो धिक्कार ॥

शरार-बुद्धि व मिठी हुए मामगी का मिथ्याभिमान अवनति की गहरी ग्राउ में मानव को विशेष रूप में धकेल देता है।

देखिये ! आधुनिक विज्ञान इस चीजको कैसे समर्थित करता है

आधुनिक वैज्ञानिक दग से मानव-देह का पृथक्करण लहन क वैज्ञानिक डॉक्टर यॉमस लॉसन ने अपन सुनार्थ प्रयोग पर गहरे अनुभवके बाद कैरुस्टन हॉलम गमायार्गिक तगसे मानव-देह क विवचनमें बताया था कि —

“उपर से सुदर रण मोहक दीरनेवाले इस मानव-देहम मारभूत पदार्थ नीचे सुजब हैं.—

० १० गेलम पानी (८०

रक्त) - कपड़ धोनेक - ७

सानुन बने उत्तरी धरधी।

० नौ जार पसिल बन उत्तना

कारन।

० २०० टीयासलाट्की काटो बन

उतना फास्फोरस।

० १-छोटी मेग बने उत्ता

लोहा।

० १ रुने क शगममें रहे हुए

विम्बुआ को गम कर द

उतना गधरु।

० मुर्गे एक दिनर को सपेद

कर दे उनना घृना।

इन तमाम चीजों को बाजारमें बेची जाय तो उमकी किमत पाच शिल्लिंग, याने, २।।।) -रुपये होती हैं।

घरम घरम सहु को करे., घरम न जाणे फीय।

दाई अथर घरमका, जाणे पहित सोय ॥

सोचिए ! संस्कार एवं सदाचार-शून्य मानव-देह
किस कामका ?

—आ० कृ० १४

॥ क्या यह उचित है ?

० पूर्ण विकृत के साथ जो जानेवाला प्रवृत्तियाँ करने का जन्म
सिद्ध हृदय मानव को स्वयं प्राप्त है, पर उसका उपयोग जीवन के
उत्थानमें काम के बजाय कामनाओं के पोषणमें किया जाय—यथा
यह उचित है ?

० मार्म उठनेवाले विचारों को विवेक के कपड़े से छाने ऐसे
ही व्यवहारम उतावले से अनर्था को उत्पत्ति अनुभवमें आती है, फिर
भी विकार एवं सामाजिक कामनाओं के पीछे अध र्था कर भावी
परिणाम न सोचते हुए वे—समस्तका प्रवृत्ति—खटपट करते रहना
क्या यह उचित है ?

० जिन चीजों को साथमें ले कर जन्म पाया, मरते समय भी
साथ चले नहीं, उन चीजों के पीछे पूरा जीवन लगाकर वास्तविक
जीवन की मानवता के लिए लापरवाही बताना—क्या यह उचित है ?

—आ० कृ० ०))

इच्छाधी नरि सपने, रोये विषद न जाय ।

पण अज्ञानी जीवक, कर्ममय बहु थाय ॥

आनन्द-परंपरा का इतिहास

विवेक बुद्धि को जागृत करने वास्ते श्री तीर्थंकर देव-परमा मा को परम दितकर बाणा अथन उपयोगी होती है ।

इसी लिए परम कल्याण गणधर भगवतोने तीर्थंकर देव परमामा की अर्थ-गभीर बाणा को सूत्र रूपमें सूँघ कर गीतार्थ मुनियों का उमका नाम विश्व के त्रिविध तापसे सतम प्राणीया को यथोचित रूपमें देन का विधान फरमाया है ।

तदनुसार प्राचीनकालीन गीतार्थ-भगवतोने किस समय, किस प्रकार, अतिरिपम परिस्थितियों को देखते हुए जगन के धन्यागार्थ विश्वान्तिकर बीतराग-बाणी का संरक्षण एवं व्यवस्थित योननामद प्राणीयो की योग्यता के अनुरूप उपदेयानि द्वारा वितरण करनेमें कितना अटूट परिश्रम किया था कि जिसके फलस्वरूप हजारों वर्ष का बात जान पर भा तीर्थंकर भगवनों की बाणी का मौक्तिक प्रवाह अनपारिक स्वरूपमें भी बहना हुआ जगन को अनिर्वचनीय लाभ देनेवाली आनन्द-परंपरा को आज रिपमकाउ में भी जावीत रख रहा है—

इस को समझने वास्ते नीचे का ध्यानपूर्वक पढ़ और गहरा सोचे !!!

मोह विरुल ए जीवकुं, पुद्गल मोह अपार ।

पण इतनो समझे नहीं, इनमें नहीं दुठ सार ॥

■ आजसे २५१२ वर्ष पहले जगत के कल्याणार्थ वीनराग देवकी सर्वद्विन्दकारिणी वाणी को गणधर भगवतोने सूत्रात्मक रूप दिया।

○ वार नि स १६० मे आचार्य श्री स्थूलिभद्रसूरिजी की अध्यक्षता में पाटलिपुत्र मे बारह साल के भयंकर दुकाल के बाद हजारों गीतार्थ एवं शास्त्रज्ञानी मुनिया की अध्यक्षता में प्रथम आगम-वाचना हुई। जिसमें ग्यारह अंगों का व्यवस्थित संकलन किया गया और बारहवें अंगकी व्यवस्था की तैयारी कर उसे सुरक्षित रखने का प्रयास हुआ।

○ घोर नि स २४५—से २९१ के कालमे उज्जैन मे सम्राट् सप्तति की प्रेरणा और अभ्यर्चनासे आचार्य श्री आर्यसुहस्तिधरिजी की अध्यक्षता मे दूसरी आगमवाचना हुई।

जिसमे रायक्रांति एवं काल की विषमता को छे कर शिथिल बनी हुई आगमग्रन्थों की परंपरा को व्यवस्थित रूप दिया गया

—भा० सु० १

आगम परंपरा का इतिहास (२)

निष्कारण करणानिधान ज्ञानी भगवतोने जगतके उद्धारार्थ नि स्वार्थ भावसे उपदेश आदि दे कर जो निःसीम उपकार किया है उसे समझने वास्ते आगमपरंपरा एवं श्रुतान्तकी पूँजी को गीतार्थ—

जैनागम वक्ता, ने श्रोता, स्याद्वाद शुचि बोध।

कलिकाले पण भव्य ! तुज शासन, वरते ते अरिरोध ॥

पूर्वाचार्यनि किम प्रकार जीवित रखी? यह चीज अच्छी तरहसे भमझन वास्ते ध्यानपूर्वक पढ़िये।

० वार नि म ३०० से ३६० क करीब कलिंग (भेरिंग) देशाधिपति महामेघवाहन महाराजा श्रीस्वारेल की आज्ञाहूत विपत्ति से उमा सम्राट के शुभ आमरण एव "यवस्थित राज्य" म योजित प्रयत्नाक फल स्वरूप श्री कुमारगिरि पर्वत म उच्चर श्री सुस्थितमुरिजी एव आचार्य श्री सुप्रतिबद्धमुरिजी के कलङ्क मे तत्त्वार्थमूरार श्री उमास्वातिजी वाचक आदि कलङ्क महाराज हजारे मुनियों के समेलन के रूपमे तीसरी कलङ्क महाराज जिसमे ग्यारह अग एव नव परों का व्यवस्था कलङ्क महाराज

० वार नि म ५९२ करीब कलङ्क महाराज (भारत) म पू ज्ञा श्री आचार्यभित्तुरिजी के कलङ्क महाराज निप्या की मतिमन्ता के निमित्त को प कलङ्क महाराज के अनुयोगमे विभक्त कर लिया। यह देश कलङ्क महाराज के जाती है।

० वीर नि म ८३० ~ ८४० कलङ्क महाराज की कलङ्क महाराज की अयत्ता म मयूरग के कलङ्क महाराज मयकर वागहवर्षी दुष्मान के कलङ्क महाराज के कलङ्क महाराज

धन जीवन तन सन्त नई कुं है

रुण्य बलमद्र द्वाँ क उन् है

अनक गीतार्थ आचार्य एव हजारों श्रमणों की हाजरी में व्यवस्थित सफलता किया। यह पाँचवीं आगमवाचना हुई।

० बार नि.म ९८० करोड़ पू.आ.श्री देवर्द्धिगणितमाश्रमण भगवत् न बारबार होनेवाले दुष्काल के कारण नष्ट हो रहे भुनक्तु की मौलिक परंपरा को जीवित एवं चिरस्थाय रखने वास्ते अनक गीतार्थ आचार्यों की समति एवं नियामे तमाम उपरुध आगम साहित्य को त्रिपिबद्ध-पुस्तकाब्द्ध करवाया यान ताडपों पर लिखवाया।

यह छठी आगमवाचना हुई।

इसमें ८७ आगमों का सफलता हुआ, जिसमें से आज ४७ आगम व्यवस्थित रूपमें उपलब्ध हैं। —प्रा० सु० २

हितकर मार्गदर्शन

विश्वमें प्रत्येक प्राणी निम्तर प्रवृत्तिशाल होता है, तमाम प्रवृत्तियों का मुख्य ध्येय भिन्न ० रूपसे भी वास्तविक ज्ञाति प्राप्त करने का होता है, परन्तु प्रवृत्ति एवं ध्येय के बीच अज्ञानदशा की गहरी खाई को समझदारी एवं ज्ञानी सद्गुरु के मार्गदर्शन के बगैर पर व्यवस्थित होनेवाली सुसंगत प्रवृत्तियों से भरा न जाय तो प्राणीमें जुते हुए बैलकी तरह तमाम प्रवृत्तियाँ केवल परिश्रम रूप बन जाती हैं।

अखियाँ खुली हैं जब लग, तब लग बाहर सब कोय।
अखियाँ भींचाणा पीछे, और ही रग न होय॥

इस सनातन मित्रान को समजते हुए जानी मद्रापुरुषोंन ससार-
को हितकर मार्गदर्शन दिया है कि —

मुमुक्षु ! यदि तेरे जीवनमे सची शांति की स्पृहा जगी
हो तो इधर-उधर भागा दौड़ी न कर । जग दिल को स्थिर
कर । । ।

जिस चीजक त्रिष्टु तु उटपटा गदा है, यह चात्र तेरे पास—
अथ तमाम पदार्थों की अपेक्षा अधिक ननदीक ही भरी पड़ी
है, तेरा मानम बाहरी पदार्थों को सुभाजनी चाउ न कम कर
उहे पान की, भोगन को, एव उनसे जावन को समृद्ध बनान की
स्पष्टपट न कभी पुरसद नहीं पाता । । । धरमे अलूट स्वचाना
मरा पडा है फिर भी उसे देखन व समझाने का सावधानी क
अभावमे दोन-द्वान एव दगा बन हुए गर्मधामत श्रेष्ठिपुत्र जैसा
सही निपम दशा हो गई है । । ।

अठ. जरा गहराई से अपने-आप की प्रवृत्तियों को
समझाल । । । अन्यथा अज्ञान-अविज्ञेय एव उर्मिवन की जाननात्र
प्रवृत्तियाँ तुम को विपम पथात्ताप की आगमे घेरल दगा । । ।

आ० मु० ३

रूपे देवकुमार सम, देखत मोहे नर-नार ।

सोही नर खिण एकमा बल-जल होवे छार ॥

महामांगलिक श्री नमस्कार-महामंत्र

श्री
नम-
स्कार-
समो
मंत्र



न
भूतो
न
भवि-
ष्यति

श्री नमस्कार समो जगि, मंत्र न यत्र न अन्य ।
प्रिया नवि औपध त्रि, एह जप ते घ य ॥

सर्व श्रुतमा गहो ष प्रमाण्यो ।
महानिर्गोधे भर्ग परि वग्नाण्यो ॥



श्री नवकार महामंत्र महिमा

पढ़ो मंत्र नवकार, मदा मकट उगरे ।

पढ़ो मंत्र नवकार, ताव तेनरो निवार ॥१॥

पढ़ो मंत्र नवकार, भाग्यभंडार हुए भरपूर ।

पढ़ो मंत्र नवकार, कायगुन हुबे शूर ॥२॥

पढ़ो मंत्र नवकार, दुःख आपदा टाळे ।

पढ़ो मंत्र नवकार, मांशमांसगु आल ॥३॥

जपीए मंत्र निनवरतगो, दिन २ जग अधिको चढ़े ।

नवकार मंत्र पढ़्या पाउं, प्राणी ओर मंत्र काढे कु पड़े ॥४॥

पिंगल पदयो न पारसी भळ्यो न तर्क-वध ।

नवकार ना नव पद थका, सदा करो आनंद ॥५॥

ज्ञान अक्षर ए पढ़ो, पढ़ो पंच नितलाय ।

ज्ञान सागरनो आउपा, पढ़त पाप सब जाय ॥६॥

काचा सगपण कुटुरा, मिल मित्र पिळ्डी जाय ।

ज्ञानो सगपण धरमका, सो अविचल मेने थाय ॥७॥

ध्याऊ सरणा ए सदा, और न मरणा कोट ।

जे नर-नारी आदरे, ते अमय-अमर पद होद ५८॥

[अजमेरसे उपलब्ध प्राचीन हस्तलिखित प्रकीर्ण पत्रोंमेंसे.]

॥ श्री नवकार महामन्त्र महिमा ।

राग-द्वेष एवं अज्ञान के बल पर उठने-उठते पुनरावृत्ति के फंसे आत्मा को मुक्त कर यथार्थ मित्रशुद्धि का गैरहाजरीसे होनेवाले सब प्रवृत्तियों को विनष्ट के आधार पर बंद कर देनेमें ही ज्ञानवादी यथार्थ सफलता है ।

रास्त्रनिक जायाशुद्धि के इस परमार्थ का प्रत्येक जैन प्राप्त कर मकें इस लिए श्रीनमस्कारमहामन्त्र का आराध-गोपात्र सर्व साधारण प्रचार एवं उपयोग शायद तुल्य होना जरूर ज्ञानीयों चलाया है, और देखा भी जाता है कि आज अनेक चालों की अपेक्षा इस महामन्त्र का प्रचार अधिक है ।

परंतु महामागडिक श्रीनवकार-महामन्त्र के असली स्वरूप एवं उमक रहस्य का सामान्य जानकारी न होनेसे इस महामन्त्र का उपयोग जीवन में कोई ग्रास पगिरता नहीं लाता, यह परिस्थिति आज करीब सार्वत्रिक है, इस को सुधारन बास्ते नीचे की बात पर ध्यान देना जरूर है ।

“जीवनमें अत्यावश्यक बाह्य पदार्थों की सामग्री का जुटाव अपनी आत्मशक्ति के सदुपयोग में से पैदा होनेवाली चुनकशक्ति (पुण्यवत्) के बल पर ही होता है ।

पच पापेष्ठी छे जग उचम, चीद पूरनो मार ।
गुण जस फहेठा पार न आवे, महिमा जाम अपार ॥

यद्यपि यह शक्ति व्यावहारिक पुण्यार्थ के द्वारा राखा बन होती है, तथापि व्यावहारिक शक्ति के सदुपयोग की विरमिति रक्षा में प पुण्यार्थ भा मिद्धिदायक हो जाता है, अन्यथा बहुत छटपटान पर भी जुड़ नहीं बन पाता ।

अतः अपना प्रवृत्तियाँ को सग आत्मशक्ति के दुरपयोग (हिंसा, जूठ, चोग, आदि प्रवृत्तियाँ) से बचाने हुए हो मके उतना ममग, गुणानुगाग, परोपकार, मधितन आदि द्वारा थोडा-बहुत मा आत्म-शक्तियाँ का मौलिक सदुपयोग रगने रहना ।

इस पथ के परिपालन का निवेक रमर श्री त्वकारमहामन्त्रक औपय का सेवन जुड़ निना म हा पूरे जीवनका कायापलट कर देता है ।

इस महामन्त्र का रमरण करनेवाला का एक बात और भी याद रगन पैमा है के -

“मृळ करु भा कभी परनिदा, पचचा एव पदप निरादण के मार्ग पर वृत्तियाँ को जान न तीजिये, इन कामाँ के लिए “पर प्रकृती अधिरान्धमृक.” बन कर “अपन आपका में मौलिक मर्ने के महान कार्यम जुटा हुआ है”-का भावना को मुटु रगसे हृदय में जमा लेना चाहिए ।

इस प्रफार श्री नमस्कार महामन्त्र का किया हुआ रमरण आत्मशक्तियों की निखरी हुई अपूर्व ताकत पैदा करता है ।

आ० सु० ४

रतन रणी जेम पेटी भार अन्य यह मृक ।

चौद पूरवनो सार छे, मत्र ए तेरने मुळ ॥

॥ महापुरुष का जन्म

‘आज यह पवित्र दिन है’ जिस दिनकी मागलिक-गति का बारह बजे इस अवसर्पिणी काष्ठ के बाईगवे तीर्थकर बाल-मन्त्रनाम परमपूज्य श्री नेमिनाथ प्रभु का जन्म हुआ था ।

मसारम जैसे तो प्रतिममय अननानन जाव जन्म-मरते रहते हैं, परन्तु सर्वसाधारण जन्म-मरण के कार्य में भी अनौत्साहिकता एवं मङ्गलमयता पैदा करके जगत् में सामन्य आदर्श जीवन की महिमा को प्रस्तुत करमवाले महापुरुषों का जन्मसाधारण भी जीवन-प्रसंग अज्ञान-मूढ़ मयारी प्राणाओं को एक अतिविशिष्ट ज्ञान-मार्ग प्रदान करता है

यह यह है! जरा ध्यानपूर्वक पढ़ कर भीतर का नासि इस मार्ग को सुन कर पवित्र बन ।

“भव्यामा! सुन्दार जीवन के प्रारम्भकाल को सुनियार्थ में विशिष्ट मत्कारिता रूप अमून्य स्वाद-स्वातर का होना जरूरी है, जिससे कि सासारिक दृष्टि से अतिसामान्य-रूप में माना जानेवाला इस भौतिक शरीर के जन्म का प्रसंग यह सूचित कर सके कि —शरीर में विराजित अनन्त-गुण-निधान चैतन्य-स्वरूप आत्मा के विकासक्रम का व्यावहारिक स्वरूप पा कर अपने संपर्क में आनेवाला से लगा कर सारे

वेम्बत सब जग जात है, धिर न रहे इहां कोय ।

सु जाणी मर्तु कीजिए. हेये विमाही जोय ॥

विश्व को यथाशक्ति अपनी विक्रमिन् प्रजादि गुण संपदामे लान पटुवान
की लपटाता क डाम जीवन यथार्थ रूपमें सफल-धन वरगा हो

—आ० सु० ५ (१ का धप)

मनुष्य अवलम्ब मन्त्रि निमित्त उपयोग कर के अनुरं मय गति
शा का अदभुत जन्मा सुखोपधिपाद

धार्ष्ट्या की नीध

नाम	तोला	नाम	तोला
दुग्ध की जट	१०	धैर्याबन्ध	२०
नम्रता का चूर्ण	१०	निपमितता का अर्घ	१५
धर्म रवि का मारा	५	मैथोष का	१५०
धडा का नेल	१००	मदनप्रीत्या का	३०

और पवित्रता की नामणी-तोला ५०

दवाई बनान की विधि.—अपने-आदिपत्र ॥ दुग्ध की
जट की धडा क नेल म टाकर मय रूप बढाई ५ सममात्र
का आग ता पका का गुण पकवान पर नापे उ तार क अमम नैन साद
क अर्घ और धर्म रवि का मय मिगाये, धर्म मनुमावता क
धर्म म मिगा का दृढनिधय का शाली म टाकर २५०
पवित्रता की नामणी मिगाये ।

जे बचने पादु म लुण, जेदयी पाये माणीपादि ।
शंशु पदे निज आतमा तत्र उल्ला मे शत ॥

दवाई सेवन करनेका तरीकाः—सुबह—शाम नम्रता का चूर्ण लेकर धैर्याविच्छेद पाट पर इस दवाई का नियमित सेवन करे

दवाई का असरः—इस दवाई के सेवन से कुछ दिनमें ही तमाम प्रकार के दुर्गाका विनाश होकर अद्भुत सुख और शान्ति का अनुभव चमत्कारिक ढंग से होगा ।

दवाई का परहेजः—इस दवाई के सेवन करनेवाले को मिथ्याचार, अविवेक, विषय-लालसा, पुद्गल-प्रेम, दमन एवं कपाय का परहेज करना जरूरी है ।

इस दवाई के बचाने के परिश्रम से जब हर इस दवाई के अपूर्व लाभसे जो लोग वर्चस्व रह जाते हैं उन भक्त्यामात्रा के हितार्थ नाचे लिये पते पर यह दवाई बना-बनाई तैयार पैकेट के रूपमें एकनिष्ठ एवं सुदृढभक्ति की नाम का कीमती द्रव्य उपलब्ध है। निमित्त का जाता है जरूर इसका लाभ उठावे

शुद्ध-संयमपालक कार्मसी !

प्रो. प्रसन्न आत्माशारी सद्गुरु

ठि. धर्मविलास चौक

पो. आत्मारामपुर (देश-अलगव)

धर्माश्रयक मेडिकल कार्मसी !

प्रो. सुदेव-सुगुरुभक्त आश्रयक

ठि. मन्मथ बाजार

पो. आत्मारामपुर (देश-अलगव)

—श्री० सु० ७

धर्म-धर्म सहृ को करे, धर्म नहि जाणे धर्म ।

धर्म जिनेश्वर चरण ग्रथा पड़े, कोड न चाये धर्म ॥

॥ २॥ १॥ मुखोपधिपाके ईश्वरको रहस्य ॥

जीवन में अपूर्व शान्ति, एवं आनन्द प्राप्त करने के लिए तुम्हें जो पुराने कर्मोंको निर्वहण हो रही है, ऐसा समझ कर हँस-मुँह सहन करना चाहिए।

साथ ही आत्मा के गुणों को त्यागकर रह हुए कर्म के आवरण को हटानेवाले तुम्हें जो सुख स्वच्छ प्राप्त में महायुक्त मानने का एवं समभाव का उल्लास उत्पन्न करती है।

तथा क्षमा, नियमितता और विवेक के साथ हर प्रवृत्ति करना उचित है, -नोप की प्रधानता रखते हुए धर्म का रक्षित को बढ़ाकर सम्भावना तथा सुदृढ़ निश्चयपूर्ण विचार एवं आचार की परिणतताको विशिष्ट रूपसे अपनाकर प्रयत्न करना चाहिए।

हमेशा पूजा, गुणों के विचार के साथ अन्तर्निरीक्षण करते रहने से आत्म-शक्ति बढ बढ़ता है, फलतः दुर्गा का प्रवेश शेष होता रहता है।

परन्तु यह सब करने में नम्रता और धैर्यकी आवश्यकता है, अन्यथा आत्मा के गुणोंका बोझ-बहुत भा विकार प्रियप्रियमान या मानसिक क्षुब्धता के कारण रुक कर आत्मिक एवं परमपरायण वायु दुर्गाकी वृद्धि ही हो जानी है।

ममलु खडा है चौकमे, दोना धाजु गैर।
रही निरीने दोनी, रही निरीने दोनी।

इस प्रकार तमाम दुःखों का नाश उस “सुखोपधिपाक”
दवाईसे अवृक—रूपमें हो करके रहता है

—भा० पु० ८

धर्म या व्यापार ?

आये मस्कारों से वासित प्राणी अन्धाधुनिक रूपम भी धर्मकी
आराधना के लिए सदा तत्पर बना रहता है, परन्तु वास्तविक धर्म
के स्वरूप का भाव सदगुरु द्वारा न मिलने के कारण कई लोग
धर्म की प्रवृत्ति करते हुए भी उसका यथार्थ फल नहीं पाते हैं

अतः अननानत पुण्यराशिके बल पर धीतराग—प्रभु के शासनकी
पाये हुए अनुपम सौभाग्यशाली पुण्यात्माओं को तो इस चीज का
विचार करके प्राप्त हुए धर्म की आराधना के मौके का लाभ उठा
लेने की सतर्कता रम्यनी उचित है, अन्यथा धर्म की आराधना का
मुल्य आदर्श अशुभ मस्कारों की विषम आयाम सहज ही विभ्रत—सा
हो कर “मैं ऐसा करूँ ता ऐसा हो जाय” आदि मौदेयाजों—
या व्यापारी पद्धति से सकामभावना के निष्पद्यतम स्वरूप की व्याः में
गिरने का मौका आ लगता है, फलन जीवन का आदर्श अपनाते
वास्त धर्म का आराधना के अमल्यो स्वरूपका यथोचित भाव पान की
हमियत भा गृम हो जाती है

विवेकी, मुमुक्षु एवं विचारशील धार्मिका का यह पवित्र कर्तव्य

ज्ञानी शु ज्ञानी मिले तो, हीरानी लुटालुट ।

ज्ञानी शु अज्ञानी मिले तो, चमर्नी मायाशुट ॥

वन जाना चाहिए कि—व दूरदम अपना आन्तरिक वृत्तियाँ म नकारा
क व्यामोह के कारण उठनवाली मौलाशाह्यापारी दम से मात्र
एहिक—तुच्छ फल का पान का ही गरज स्वते हुए अनन्य माधारण
लोकोत्तर धर्मकी महिमा को घटाने का दुस्ताइस न करे

प्रत्येक धर्म का क्रिया जीवन—शुद्धि क आदर्श का प्रस्तुत कर
यथावश्यक निष्काम भावम करनी चाहिए —श्रा० सु० ९ (प्रथम)

सही आझादी

जगन का प्रत्येक जीव स्वतंत्रता को मचे दिल से चाहता है,
किमी का आधीनता में रहना किमी ज्ञाव को इष्ट नहीं होता, फिर
भी सत्ता म देखते हैं कि उठे—बढ़ समाम जीवाँ को सुख—शान्ति के
लिए सड़कते हुए भी अपन—आपका हैसियन के अनुमार मौलिक
शक्तियों का विकास न होने से पराई शक्तियाँ का उधार देने वास्ते
इच्छा क न होते भी शक्तिशाली अन्य प्राणीयाँ के आधिपत्य में
मजबूरी म भी रहना पड़ता है, सचमुच में ऐसा क्यों होमा है? यह
दुनिया के लोगाँ को माष्टम महा होता है, अत एव आझाद रहन का
विचार मात्र भावना के क्षेत्र में ही सीमित रह जाना है

वस्तुन आझादो का मतलब यह होता है कि —“वासना एव
विकारों की परवशता ही वास्तविक गुलामी है, और आम—सयम,
वायना निग्रह, इन्द्रिय—दमन द्वारा अपनी वृत्तियों को काबू में रख कर
यथायोग्य प्रवृत्ति करना ”

पणो तो परख्यो नहीं, दहो कीधो दूर ।

सह्य शु लागी रघो, नन्नो रघो ॥ दृष्ट ॥

अच्छ व्युत्पत्ति की-अस्तिआदादी शब्द जिन दो शब्दों का बना है वे दो शब्द 'आस्त+आस्ती' का भी यह ही रहस्य है कि आस्त-यान धामा की आदि-प्रारम्भ या मुक्तता जिसमें है अर्थात् आ-या-त्मिकता के संस्कारों का लक्ष्य रख कर यथायोग्य प्रवृत्ति ही वास्तविक अज्ञादी है —या० सु० ९ (द्वितीय)

पंद्रह अमस्त का संदेश

भारत की जनता स्वतंत्रता का लक्ष्य में रख कर आज खुशीय मना रही है, परंतु उसके परमाणु का संचयन नहीं समझ सकने के कारण स्वतंत्रता के मिथ्या मदमें बिना किसी नियंत्रण के स्वच्छंद रूप में यथेच्छ विचार एवं प्रवृत्ति करनेवाले तथाकथित स्वतंत्र आधुनिक भारत के नवयुवक अपने आप के जीवन को अव्यवस्थित बना रहे हैं—यह बात अत्यंत शोचनीय ॥

अपने विचारों की निषेक एवं समझदारी के मूल से जान कर यथोचितता को नापने की स्वतंत्र सिद्ध ताकत खुदम पेदा न हो, तब तक पाद हुद स्वतंत्रता जीवन को उन्नत नहीं बना सकता है

अन जीवन को यथाशक्य निषेकी महापुरुषों की निश्राम स्वामी बनाते हुए शास्त्र एवं सदाचार की मर्यादा की वफादाग रखते हुए अपने मोक्षिक विचारों की पूर्ण स्वतंत्रता पाद जाय तब आधुनिक स्वतंत्रता-आज्ञादी का मनाये जानेवाला त्यौहार सफल हो सकेगा

—१५/८/१९५६

चेतन ! तैं ऐसी करी, जैसी करे नहीं कोय ।

विषया-रसने कारणे, सर्वम्ब बैठो खोय ॥

भयकर अज्ञान

कोई भी काम करते समय हमें ज्ञा अंतिम परिणाम सोचना जाना है, कामचलाउ छोटे-बड़े मध्यवर्ती नफ-नुकसानों से किसी चीज़ का स्वरूप नहीं पहचाना जाता है

इस दृष्टिकोण से अज्ञान-मूढ़ प्राणीओं की अयुक्ततापूर्वक की जानवाली व्यावहारिक प्रवृत्तियों को जाँचन पर स्पष्ट प्रतीत होना है कि —

भौतिक पदार्थों के दीप्तिमान लुभावन बाध स्वरूप की चका चौध में भ्रमित—से बन कर अज्ञानी प्राणी व्यावहारिक प्रवृत्तियों का साता लगाए बैठे हैं, फलतः प्रवृत्तियों के अस्मिन् फंदे में फँस कर विचार शक्ति एवं समीक्षकशक्ति करीब २ गेंबा कर कल्पना एवं मानसिक स्वप्न मृष्टि के ही आधार पर मनपड़त ज्येष्ठों की वृत्ति के नाम मिला हुई शक्तियों का दुर्व्यय करते हुए गुमराह बन जाते हैं

धरतुन आंतरिक शक्तियों के यथायोग्य सदुपयोग के अभाव के कारण ही दुनिया के तमाम जीव अपनी इष्ट-साधना में कराव २ अपूर्ण ही बने रहते हैं

जीवन की तमाम प्रवृत्तियों के उत्थ के विषय में रहा हुआ यह भयकर अज्ञान पूर्ण विवेक और गहरी विचारणा के धल से हठाने का सप्रयत्न करना चाहिए

—भा० सु० १०

दुख के माये पत्थर परो, जामे विवेक नसाय ।

बलिहारी चम दुख की, पल-पल मधु सुमराय

बिंदुमें विराट

जलकी एक बूंदमें विराट विश्व !
देखिये ! पढिये !



सोचिए !

समझिये !



एक जलबिंदुमें रहे हुए

३६४५० सूक्ष्मजन्तुओंका चित्र



उमे दम्ब कर चक्किा मंत ?

अहहहह

जल की एक घुँदमें ३६४५० जीव ?

इसे आप नवग्रहों की ज्यों कल्पित भी न मानिए ?

परंतु आधुनिक विज्ञानकी खोजबान प्रमाणित यह एक वैज्ञानिक मय है

इलाहाबाद गवर्मेण्ट प्रेस प्रकाशित "सिंघपदार्थविज्ञान" नामक पुस्तकमें यह चित्र प्रकाशित है

इस पुस्तकमें प्रखर वैज्ञानिक डॉ. स्कॉर्मरीने सूक्ष्मदर्शक धरा (माइक्रोस्कोप) के मार्फत किये हुए प्रयोग का वर्णन है, जो स्पष्ट साबित करता है कि सूक्ष्मदर्शक के द्वारा मार्फत अपनी गुश्कों के द्वारा देखकर और गिनती लगाकर बाहिर किया है कि -

“गामान्यतः जलमें एक घुँद

एक बिगट विष है”

अर्थात्—उसमें उन्नीस हजार चारमा पचास (३६४५०) सूक्ष्मजीवों का समूह (एक गूँठ से कम विनना) होता है ।

रात गमाइ मावने, दिवस गमायो खाप ।

हीरा जैसा मनुष्यमर, कौड़ी बटखे

इस प्रकार आधुनिक विज्ञानने जलके मात्र एक बिंदु ३६४५० सूक्ष्मजंतुओं का समूह का होना जो प्रमाणित किया है, उसे जानकर विश्ववत्सल दिव्यज्ञानी महापुरुषों की जलबिंदु में अमन्य जलरूप शरीरामक जीव होनेकी बातको सुदृढ़-विश्वास पूर्व परम आदर-भाव से मान्य करना विपर्कियों का कर्त्तव्य है और इस कर्त्तव्य को अदा करनको जबाबदारों के नाते नाभे की बातों पर पूरा ध्यान दीजिये । । ।

• जरूरत हो उतना ही परिमित जल स्वच्छ-मांटे कपड़े से छानकर काम में लाने का विवेक रखिए

• बेफिजल जलका अप-
घ्यय मत करिए !

• स्नानादिक के वास्ते नल
वैसे ही खुला रखकर
अपर्यादित जल का
विनाश न करिए !

• “वस्त्रपूत पिबेज्जल”-
“पानी पीजे छानकर
और गुरु कीजे जानकर”
-आदि लोकोक्तियों के
परमार्थ को रूपाल में
रखकर पानी का उपयोग
छान कर के ही सोच-
समझकर करिए !

घरमें समरण सहु करे, दुःखमें करे नहीं कोप ।

जा घरमें समरण करे, तो दुःख काहेको होय ॥

• नदी-तालान आदि में
पशु की ज्यों गिरकर
व्यक्तिगत मौज आनंद
लूटने के नामपर पानी को
भंशुब्ध न कीजिए !

• “आत्मवत्सर्वभूतेषु०”
की शिक्षा को ध्यान में
रखकर जलका अपव्यय
कर के अमरव्य मूल-
जन्तुओं को त्रास मत
दीजिए !

• इस विशाल जगत के छोटे-मोटे तमाम जीवों से बढ़
कर मानवने विशिष्ट बुद्धि और शक्तियाँ पाई है, उनका
सदुपयोग अपने से छोटे जीवों के प्रति हमदर्दी-पूर्ण बर्ताव
रखने में कीजिये !

• विवेक बुद्धि, समझदारी, इन्मानीयत एवं मानरता
का निचोड़ निर्मल शुद्ध जन्तुओं को सत्रस्त नहीं करने में है.

आज की दुनिया दुःख-ग्रस्त बहुत है, उस में ऐसी उड़ी-बहा
कई जोरदर्मायें भा अवाबदार है, अमशाय-गरीबी की हाथ कभी
निष्कल नहीं जाता है,

वर्तमान काल में सुम्हा होन का व्यावहारिक एवं मृगमतर उपाय
यह है कि—जितना मन उतना दूसरा के प्रति अहिंसक बर्ताव
रखा जाय ।

दुःखी देव करुणा रहें, अवगुण दूर सदस्य !
गुणीजनों को बदना मैत्रीभाव समस्त ।

जरा साबने ऐसी बात है कि—नव हमारे मजिस्ती जीव—सृष्टि का धनानकी शक्ति मही है तो उमे गढ़—भ्रष्ट कर बिगाड देन का वश हक है और बिना बजह ऐसी अनधिकार चष्टा करन को यदि हम तैयार होते हैं, तब इस अनर्थकारी हमारी चुचेष्टा के जवाब स्वरूप हम अपनी जास पानीके उन जीवा को—प्रत्येक को मडले म दना पड़ेगी अर्थात्—उनके हाथोंसे हम भी निराकरण मौत क गाट उतरने को बिदग होगा पड़ेगा, सोचिए 'श्यामोज' कर कुछ विचार करिए 'कि अपना मूलक जरा सी गल्मी आगे पर कैसा बिगाड स्वरूप लू लगी

हमन्त्रिण बुद्धिगाली मानव का प्रथम और मुख्य कर्त्तव्य बूझ जाता है कि—मोच—समय कर अपनी कार्य व्ययर्थ ऐसी बतावे ताकि भावि परिणाम में अनर्थ पैदा कर निराकरण पशानाप न करना पड़े यह पद कर गाव—समय क माव प्रतिष्ठा लीजिये कि—

- १ रेफिजल पानीका अपत्यय नही करेगे
- २ बिना छने पानी काम नही लायेगे.
- ३ जचित्त पानी पीना सबसे अच्छा है.

ससार में छुप कहां?

निर्जन जंगल म नरगड क पड की दा चूल् दाग काटी जान वाली शाखा पर लटका हुआ आदमी नाच गहर—कुँए म उडा सौंप

वीस बमाना जे नरा, कोइ नही जम बर ।
पण नारी—सगते तेहने, निथे चटे कलक ॥



जरा सोचने 'जैसी बात है कि—चम हमारे मजिमी जीव-मृष्टि को धनानकी शक्ति नहीं है तो उस नष्ट-भ्रष्ट कर बिगाड़ देना का क्या हक है? और बिना बजह ऐसी अनधिकार चला करने को यदि हम तैयार होते हैं, तो इस आर्थिकारी हमारी बुद्धि के अर्थात् 'स्वल्प' हम अपनी जान पानीके उन जीवों को प्रत्येक को बदले में देना पड़गी अर्थात्—उनके हाथों से हम भी नि कागण मौत के नाट उगारने को बिचस होना पड़गा, सोचिए 'स्वामोश हा कर कुछ विचार करिए' कि अज्ञान मूलक जरा सी गलती आगे पर कैसा तिराद स्वल्प में लेगी

हमल्लि बुद्धिशास्त्री मानव का प्रथम और मुख्य कर्त्तव्य बन जाता है कि—मोच-समय कर अपनी कार्य व्यवस्था ऐसी बनाये ताकि भावि परिणाम में अनर्थ पैदा कर निष्कारण पश्चात्ताप न करना पड़े।

यह पढ़ कर सोच-समझ के साथ प्रतिज्ञा लीजिये कि—

- १ बेफिजल पानीका अपव्यय नहीं करेंगे
- २ बिना लने पानी काम नहीं लायेगे-
- ३ जचिन पानी पीना सरमे अच्छा है,

समार में सुख कहों?

॥ निर्जन जगल में तरंग के पेड़ की दा चूना द्वारा काटा जात घाली शायर पर लटका हुआ आदमी नाच गहर-कूँग में उड़ा साँप

बीस बमना जे नरा, कोइ नहीं जम कर।
पण नारी-सगत नेहने, निश्च चढे कलक ॥

मधुविंदुसरीखो विषय नीसो, जोई पासो निच्छु ।
 नर जन्म हाथो मोद धार्यो, पिंड मार्यो पापयु ॥



मधुविंद दृश्य (संसार स्वरूपदर्शन)

जरा सोचन- 'तैसी बात है कि जम जमाते मजिस्सी जीव-मृष्टि का धनानेर्षी शक्ति नहीं है तो उस नष्ट-भ्रष्ट कर बिगाड दे का वश हक है? और बिना बचह केसी अनधिकार चेष्टा फग्न को यदि हम तैयार हलते है, तब हम अनर्थकारी हमारी दुचेष्टा के जवाब स्वरूप हम अपनी जान पानीक उन जावा को—प्रत्येक को थकते म देना पड़ेगी अर्थात्—उनके हाथों से हमें भी निष्कारण मौन के नाट उतारने को सिनना हाना पड़गा, सोचिए ' ग्यामाज हा कर टुठ विचार करिए ' कि अपना मूलक जरा सी गलती आगे पर कैसा विराट् स्वरूप ल उगा।

इसलिए बुद्धिगामी मानव का प्रथम और मुख्य कर्तव्य बन जाता है कि—माच-समझ कर अपनी कार्य व्यवस्था ऐसी बनाव ताकि भावि परिणाम में अनर्थ पैदा कर निष्कारण पश्चानाव न करना पड ।

यह पद पर माच-समझ के साथ प्रतिना लीजिये कि—

- १ रेफिजल पानीका अपव्यय नहीं करेंगे
- २ बिना ठने पानी काम , नहीं लायेगे
- ३ अचित्त पानी पीना सबसे अन्त्र है.

समार म सुग कहाँ?

निर्जन जगत् में रंगत् के पद की दा पृष्ठा द्वारा काटी गयी पाठी शाखा पर चटका हुआ आदमी नाच गहर—कूँप में गड़ा सौंप

वीस-वमाना जे नरा, कोइ नही जम करू ।
पण नागी-सगते तेहने, निशे चढे फलक ॥

और चार ठोठ नाँप—को फूँकार अब मारने के लिए आये हुए हाथी द्वारा पड़क के हिलाने के कारण शहद की मक्खीयाँ के पड़े तब चटकास होने लगे। भयकर मनाश्राम भी शहद के एक—दो बूँद के स्वाद में अपने तमाम दुःखों को भूल जाय तो वह जैसी मूर्खता है।

उसी तरह अज्ञानी जब समार रूप जंगल में सुरा—प्राप्ति के सच्चे मार्ग को मूँठ कर ब्रह्मावस्था रूपा राक्षसी एवं मोत रूप हार्थस चलते भारत जायनरूप बरगद के पड़क। शाखा को पकड़ कर लटपट लगा, जो कि शाखा काट—सपद चुहे के समान रात—दिनस कटती जा रही है, उमी शाखा के नाचे दुर्गति रूप भयकर बड़ा फूँका और उसमें नरक—गति रूप बड़ा भयकर अजगर और कोध—मान—माया—छेभरूप चार साँप फूँ—फूँकार मार रहे हैं, अनेक प्रकार का मानसिक चिन्ता रूप शहद की मक्खीयाँ पर घान कर रही हैं, इतना हाने पर भी सासारिक पदार्थों के द्वारा प्रियता के उपभोगसे काप निक—असद्रूप सुरा रूप शहद के स्वाद में लुब्ध हो कर अपने को सुखी मानलन की अशुभ्य गलती समार के प्राणी देखते रहते हैं।

कहिये ता ' कहाँ है समारमे सुख ? सिषाय दुःख, दुःख और दुःख के सिषाय है क्या इम दुनियामे ! ! !

—आ० सु० १२

पाप-घट पूरण भरी, तैलियो तिर मार।

ते केम छटीष जीवदा !, न कर्यो धर्म लगात ॥

और चार डोटे नौपा—को फूँकार एवं मारने के लिए आये हुए हाथी द्वारा पेड़ के टिप्पन के कारण शहद की मक्खनियाँ क बड़े तेज चटकास होनेवाला भयंकर मनादशाम भा शहद के पक्क—दो बूँद के स्वात्म अपन तमाम दुःखों को मूठ जाय तो वह जैसा मूर्खता है।

उस तरह अज्ञानी जीव समार रूप जंगलम सुख—प्राप्ति के गम्भीर मार्ग को भूठ कर वृद्धावस्था रूपा शक्तिमी एवं मृत रूप हाथमें उचने धारते जावनरूप बरगद के पड़ का शाखा को पकड़ कर लटकन लगा, जो कि शाखा काल—मन्द चुड़े के समान रात—दिनस कटता जा रही है, उती शक्ति का नीच दुर्गति रूप भयंकर बड़ा फूँभा और उसमें नरक—गति रूप बड़ा भयंकर अजगर और क्रोध—मान—माया—लोक रूप चार साँप फूँ—फूँकार मार, रह है, अनक प्रकार की मानसिक चिन्ता रूप शहद की मक्खीएँ पेशान कर रही हों, इतना हान पर भी सात्त्विक पदार्थों के द्वारा विषयों के उपभोगमें काष्ण, निक—असद्रूप सुखरूप शहद के स्वाद में लुब्ध हो कर अपन को मुग्धी मानउन की अनाम्य गलती मसार के प्राणी दोहगत रहते हैं।

कहिये ता ! कहाँ है समारमे मुख ? सिखाय दू ख, दुःख और दुःख के सिखाय है क्या हम दुनियामे ! ! !

—आ० सु० १२

पाप-घट पूरा भरी, तें लियो मिर मार।
ते। केम छटीय जीवदा !, न कर्यो धर्म लगाय ॥

भावक-कुल की महत्ता

किसी चीज को पान के लिए उस के यथायोग्य स्वरूप की जानकारी एवं उसे पाने वास्ते यथोचित प्रवृत्ति का शुभ सम्बन्ध होना जरूरी है ।

जगत् के ऊँट-बड़े तमाम प्राणी वास्तविक मृत्यु-प्राप्ति का अत्यंत डरठा रवते हुए भरसक प्रयत्न एवं खूब उटपटाहट करते हुए भी मृत्यु-प्राप्ति के अनुमूल या प्रतिमूल साधनों का यथार्थ विवेक की अपूर्णता के कारण स्वस्थता ही नहीं पा सकते हैं, बिना बुलाई अशांति-गिड़गिड़ाहट को तनिक भी दूर नहीं कर सकते हैं । सुख-प्राप्ति के अरमान मात्र दिग-स्थब्ध ही रह जाते हैं ।

क्या कारण है इसका ?

विद्यार्थी उपकारी महापुरुषों ने अपने यथार्थ-अनुभव के बल पर जाहिर किया है कि — "अज्ञान और अतिवश प्रवृत्तियों का प्रवाह जिस दिशामें बहना चाहिए, ठीक उससे उलटी दिशामें प्रवृत्तियों के नियामक विचारों की लक्ष्य-गामिता की स्वामी से बह रहा है ।"

"अतएव जगत् के तमाम व्यवहारों की पृष्ठ-भूमिका में विश्वास-वासना के पोषण की गलत मान्यता के बल पर उठनेवाली क्षणजीवी ध्येय-विहीन एवं अमंगल फलनायक होने के कारण

सज्जन-दुर्जन जाणीये, जब मुख बोले वाणी ।

सज्जन मुख अमृत श्रे, दुर्जन बिषनी खाणी ॥

सामाजिक पदार्थों का प्राप्ति या उनका उपभोग मुश्किल होने पर भावचमत्कार आत्मिक-जीवनशक्तियों के विकासमें से पैदा होनेवाली चित्त की स्वस्थता या आत्मा का धनुभर जगत् के प्राणीयों को न हो—यह स्वाभाविक है । ”

इस मनातः—मन्य के नद्वेग को आव-भाव के हृदयम उत्तारन द्वारा उन्हें वास्तविक सुख-शान्ति के गढ़ पर चढ़ाने में ही भावक-कुल की महत्ता है, चूँकि—इस कुल में जन्म लेने वाला को बचपन में ही जीवन की प्रगति या सुख-शान्ति के रास्ते रोड़े अटकानवाले विरोधी तात्वा का पहचान सुयोग्य ज्ञान की माता एवं जीवन-शुद्धि के निशिष्ट मत्कारों का पुनिरादी निरुण सन्तान पर विरक्त हो प्राप्ति के रूपमें सहन हो प्राप्त होता है ।

भावक बनने की प्रथम भूमिका ■ सिखाये जानवाले श्री-नमस्कार महामंत्र के प्रथम पदमें ही यह बात स्पष्ट रूपसे समझा गई है ।

—आ० सु० १३

भावक-कुल दुर्लभ क्यों ?

भावक-कुल में पैदा होनेवाले महानुभावों को चाहिए कि—
व अपने जीवन का महत्त्व सामाजिक दृष्टि कोणसे न समझते हुए अंतरंग शक्तियों के विकास के मानदंड से नापने की कोशिश करें,

नर-मन चित्तमणी लही, पले तु पर दार ।

धर्म करीने जीवदा, ! सकल करो अवतार ॥

चूँकि - व्यावहारिक पदार्थों के द्वारा भौतिक-जगत में सर्वतोमुखी विकास के दृष्टिकोण से जीवन के सार को समझने के रूपमें आवश्यक पुनः का सर्वश्रेष्ठ महत्त्व कभी भी हस्तगत नहीं हो सकता है

अन्तरंग जीवन-शाक्तियों के विकास के कार्य में प्रतिरोध पैदा करनेवाले विम्वरादों तथा का यथावत् रूपमें पहचान कर उनसे अपने-आप को उन्नतकी यथायोग्य प्रवृत्ति करना यह ही वास्तविक रूपमें आत्म-बल की दृढता का परिचायक लक्षण है

सारा मसार जीवन को उच्च-स्तर पर ल आनवास्ते भर-सक प्रयत्न तो कर रहा है, फिर भी जीवन की दिशा का यथार्थ निर्णय विपरीत एवं आन्तरिक-निचारशुद्धि के पैमाने से न कर सकने के कारण अनादि के कुम्भस्फारों के बल पर उठनेवाले क्षणजायी विचारों के भरोसे प्रवृत्तियों की भरमारसे आखरी में पड़े कुठ नहीं पड़ता है

इस लिये जीवन के मौलिक सर्जन की भूमिका में ही उन चीजों का यथार्थ परिचय होना जरूर है जिनकी कि विचारणा के सुमधुर प्रकाश से प्रवृत्तियाँ में सफ़रता का बीज पैदा होता है, ये चीजें हैं सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान और सम्यक्चारित्र्य इन तीनोंके त्रिवेणी संगम से जीवन को पवित्र बनाने में उपयोगी शुभ संस्कारों का सामर्थ्य आवश्यक-कुठ में धपने आप सहज ही प्राप्त हो जाता है

दियो उपदेश छागे नहीं, जो नवि चिंते आप ।
आप स्वरूप विचारता, छुटीजे सबि पाप ॥

अत एव अठारह देश के माझिक गूर्जर सपाट कुमारपाल
महाराज पट्टवड के आधिपत्य से बद्र कर आवक—कुछ की स्थिति
हरदम करते थे
—आ० सु० १४

तप का महत्त्व

हिमा भी चीन का महत्त्व उसके विशिष्ट गुणों के द्वारा जीवन
की वास्तविक सृद्धि के साधन के रूपमें होता है

अतः पुनः मन्त्राणां को भ्रम कर के विवेक एव सद्बिचारों की
भूमिका पर जीवनसृद्धि के महत्त्व को बंगान में अथ साधना की अपेक्षा
तप का स्थान सगुणिक महत्त्व—पूर्ण है। चूँकि—वामना एवं विचारों
का गुणमी में कैसे हुए आत्मन का एव अज्ञानता—पूर्ण यत्नकारों का
निष्पन्न करने के लिये त्रिन—जामन की मयादाबाला तप ही समर्थ है

सामान्य जनता तप का अर्थ सामान्यतः भूखे—मरणादायक समझती
है, पर वास्तव में तप को भूखा रहने की अपेक्षा मनको भूखा रहने
का प्रधान आचार्य ममज्ञानबाला तप का माझिक अर्थ समझना जरूरी है

दण्डिय 'पू उपा थी यज्ञोविजयजी में क्या फरमाते हैं ?

‘ इन्द्रा गोघ भरी, परिणति सपता योमेरे

तपने एहित्र आत्मा, वत्त निजगुण भोगेरे ’

अथ न—वाग्द्वार उठनेवाली नाना प्रकार की इच्छा—कामना एवं
वामनाओं का समभाव विवेक पूर्वक समग्रताग की परिणति के बल से

जेणि रस पाप कर्पा तुमे, तेणि गम कर तू धर्म ।

निवे तो भव-भव तणा. छुटीने सबि कर्म ॥

रोक कर आन्तरिक जावन-शक्तियों के विकास के विशुद्ध लक्ष्य से को जानेवाली तपस्या स्वार्थ में आत्म-कल्याण की सफ़्त साधना में उपयोगी होती है

इस प्रकार तपस्या का मार्मिक अर्थ विवेक-बुद्धि से समझ कर जीवन-शुद्धि के महत्त्व-पूर्ण कार्य को सफल बनाता विवेकी का पवित्र कर्तव्य है

—शा० सु० १५

अणुमें विराट

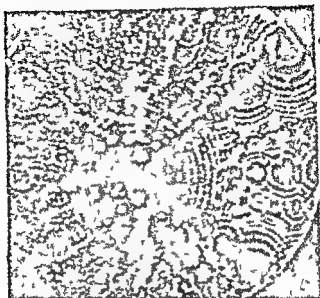
शास्त्रों में सुदीर्घ अनुभव एवं संपूर्ण ज्ञान के बट पर जगत के जड़-चेतन दोनों स्वरूपांग प्रणिपाद किया है, और अनादिकालीन अनात्म-पदार्थों के प्रति रह हुए आरूपण को कम करने वाली जड़ पदार्थ भी निम्ने शक्तिशाली है। चेतन की अविवर्धित शक्तियों को जिस प्रकार दबाती है। आदिका वर्णन सूक्ष्म रीति से दिया है

परन्तु आन्तरिक जिज्ञासा के बिना उन्हें श्रेष्ठ रूपमें मानने की भी तैयारी चित्तों नहीं होती है, उन का भावना भौतिक युग में अपन वैज्ञानिक अवेषणाभाक्त फल स्वरूप नये-अज्ञान आविष्कारों द्वारा निम्न प्रकार ज्ञानों में वर्णित सूक्ष्मतरंग अद्भागम्य पदार्थों को भी हृदयङ्गम करा रहा है। यह समझन वास्ते थोड़े से समय पढ़ें अगन्तव्य में भाये हुए वैज्ञानिक समाचार यहाँ उद्धृत किये जाते हैं

घन-कारण तू हलफले, तिम घमँमाहि या गूर ।

अनत भवना पाप भवि, रिणमा जाये दूर ॥

एक-अधुना स्वयं-दर्शन



“गुलाब म २०१२ दीपान्तरी अरुमे से गामा उ२५
 देखिये ता एक दूच के १। गमरे दिम निनगममा
 निमूम भावि विम दय भी १ मर १म अगुभा का प्रवर
 अजिशाग मरे०० माइकॉम्पे०५ डाग २०००००० गु
 बर क क ०० विममें कताये गये १”

य विर अमेरिका का पेन्सिल्वेनिया यूनिवर्सिटी के
 पदार्थ विज्ञान के प्राध्यापक डॉ। मुराने लगातार १९ वर्ष
 मशोधन एवं पश्चिम आदि का क कीरु अत्योन माइकॉम्पे०५

रोक कर आन्तरिक जीवन-शक्तियों के विकास
जानेवाली तपस्या यथार्थ में आत्म-कल्याण !
उपयोगी होती है

इस प्रकार तपस्या का मार्मिक अर्थ विवेक-
जीवन-शुद्धि के महत्व-पूर्ण कार्य को सफल बनाना
कर्त्तव्य है

—५—

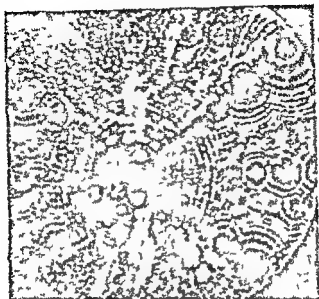
अणुमें विराट

शाखा में सुदर्प अनुमत् एवं संपूर्ण ज्ञान के बल पर
जड़-चेतन दोनों स्वरूपों का प्रतिपादन किया है, और अना-
यास-पदार्थों के प्रति रहे हुए आरूपण को फल करने वाला
पदार्थ भी मिलने शक्तिशाली है। चेतन की अविकृत शक्ति
किस प्रकार दयाली है? आदिना वर्णन गूँथ रानि से किया है

परन्तु आन्तरिक जिज्ञासा के बिना उन्हें श्रेष्ठ रूप से मानने
भी तैयारी जिनका नहा होती है, उनको आजका भौतिक युग भी अपने
वैज्ञानिक अन्वेषणात्मक एवं स्वरूप नये अजब आविष्कारों द्वारा किस
प्रकार शाखा में वर्णित गूँथतम अज्ञात पदार्थों को भी हृदयहस्त
करा रहा है? यह समझने वाले थोड़े से समय पहले अन्वेषण में
आये हुए वैज्ञानिक समाचार यहाँ उद्धृत किये जाते हैं

घन-कारण तु हलफने, तिम घममाहि या शूर ।
अनंत बनना पाप मवि, सिणमा जाये दूर ॥

पृथ्वी-अणुका सम्प-दर्शन



'गुलाब' म २०१२ दीपोन्मरी अरुमें स गामा उज्जत

उगिये न एक इच उज्जत गमर सि मे निनना गुमा
निम्न-म, आन निम दार भी न मक रीम उज्जत को प्रवृ
नकिगारी मर्वो-ज्ज माइमोस्कोप द्वाग २३' ०००० गुन
बद कर के हम चित्रों बनाये गये हैं

यह चित्र अमेरिका का पेन्सिलवेनिया युनिवर्सिटी क
पदार्थ विज्ञान के प्राध्यापक डॉ. मूरने जगाजार १९२९
मगोधन एव पश्चिम अफ्रिका क फिड आयोन माइमोस्कोप

नामक मशीन द्वारा लिया है फॉच के एक थर्मोम में दूसरा थर्मोस रख दे वैसी आकृति इस मशीन की है

अणुओं का चित्र ठेक वास्ते सुई की मुश्किलतम नोक से भी हजार गुनी मुश्किल टंगस्टन के नागकी नोक पर रहे हुए अणुओं के सामान माइक्रोस्कोप रखा गया, बाद में उनका उष्णतामान प्रयाही माइक्रोजन से गन्य करते हुए ३०० अंश नीचे उतारा गया आन्धक आयोन बनाने के लिए हेलियम वायु का उपयोग किया गया

फलत अणु-आच्छादित टंगस्टन की नोक ने फ्लुओरोमन्ट पर्दे पर एक बड़ा चित्र बताया, त्रिगुण बनावट के कैमेरेने उसका फोटो खींच लिया

इस प्रकार सुई की नोक से हजारगुनी बारीक टंगस्टन तार की नोक पर रहे हुए सूक्ष्मातिशय अणु (जो कि एक टन के दण्डान्वये हिस्से के हैं) ओ को २७॥ लाख गुना बड़ा कर के कैमेरा द्वारा स्कूल-दृष्टिगोचर बनाये गये

चित्र में देखने से पता चलता है कि स्तिन हजारों की मदया में अणुओं का समूह सूक्ष्मातिशय रूप में समाविष्ट है

सबसे इस प्रकार अणु में विराट् के दर्शन कर के 'आत्मा में बसा हुआ'—'एक सुई की नोक पर निगोद के अनन्त जोड़' या अँख की पलक के परतल पर असंख्य निगोद गोले' आदि २ अनन्त

आशा अगर जोड़ी, मनु पगला बैठ ।

धर्म बिना जेना दिन गया, तेनी भाणो बैठ ॥

श्रद्धा-गम्य जाना ना दूरी २ विधमतीकता ज्ञानया क आप्त की
प्रतीति क वर पर हर कोट सुन प्राप्ति कर सन्ता है

-भा० कृ० १

जग सोचिये तो ! ! !

० जनेन, कपट एव शरार पर जगे हुए नैल की छटान का
प्रयत्न तो सदा चलता है, परन्तु पुगनी वासन ओं के मेल की
घोने वास्ते कभी सोचा है क्या ?

० हमरों की बुरी जादूता का विवेचन करने के दरवाजे
से ही अपने मे कद प्रकार की गलतियों को छिपाने की दुरुत्ति
घुस जाती है ।

० किसी भी अज्ञात-अपरिचित दुर्त्य क दुःख को छटान क
सःप्रयत्न की शक्ति से उपरिथत तमाम सामग्री छूटा दिजिये ।

देविये ! व सितना मसा आता है उस निःस्वार्थ-
सेवामे' ! ! !

-भा० कृ० २

अफसोम है कि ! ! !

० चाटा की चालमे आनेवाउ और हाथी की चालमे शीघ्र
जानवाले पुण्य के त्रैभय को मुख-शक्ति और अमन-चमन के
नाम पर लूटा देने मे ममार मशगुल है.

० वे-स्वारी हाटत में मूर्खता या आवेश क चक्र में

रे जीव ! घुण तु बापडा ! तु म करीश गर लपार ।

ससार-स्वरूप देखी करी, निज-हैये भल्ल विचार ॥

फम कर किये हुए पुगाने कर्मों के कर्जे से मुक्त करानेवाले दुःखों को सौम्य भाव से न झेलते हुए हाय-हाय कर क नया कर्जा मिर पर चढ़ाती है यह दुनिया ! ! !

० पाप वृत्तियों के लुभावने बाण-स्वरूप के चक्र में फँस कर सनातन-शुद्ध ज्ञानानन्द सुद को विषम कर्मों के बंधन में फँसा देने की अधम्य गलती अज्ञानी आत्मा बार-बार दोहराता रहता है
—मा० कृ० ३

॥ ज्ञान कितना ? और कैसा ?

जीवन-शुद्धि के रास्ते अत्यंत जरूरी ज्ञान उतना ही अपेक्षित है, जितना कि वृत्तियों के मशोधन में उपयोगी हो, एवं च सदा-चार के पथ पर विशेष रूपसे प्रेरक हो, अन्यथा योग्य धन-मपत्ति के अभाव में गिरोहर के रूपमें (मोरगेन किया हुआ) दूसरों के कर्जमें रहे हुए सुद ही के भ्रम की ज्या समय पर अपने आप को कुन्तकारों के फंदे से न छुड़ा सकेगा। विपुल भी शास्त्र-ज्ञान तोता-पाठ की ज्यों या चंदन का बीजा दोनोंवाले गद्दे की ज्यों अर्थरहस्य रह जाता है

अतः आचरण द्वारा जिस की सफलता यथाशक्य रूपसे हो सके वह ही ज्ञान मुमुक्षुओं की उपादेय है.

—मा० कृ० ४

जीवन है अजन पहली, क्या भेद समझ में आये ? ।

ज्यों ज्यों इस को खोजो, त्यों त्यों यह चल्ती जाये ॥

॥ मधुमास और उत्तर

व्यवहारमें कहा जाना है कि—'एक पक्ष है' है 'एक पक्षिये से गाड़ी नहीं चली है' इत्यादि है कि हर कार्यमें वाय (निमित्त) कारण पद कारण दोना परस्पर आपेक्ष रूपमें उल्लिखित रहता है

अतः हर कर्म के उदयादि प्रमाण में नगरेन्द्र क्षेत्र, कान, भाव और भय वाय निमित्त रूपमें तदनुसार अशुभ कर्मों का उत्पन्न न होना सम्भव है। अशुभ द्रव्यादिका मङ्गयोग उपस्थित हो,

यदि शुभ द्रव्यादि का उपस्थिति हो तो उदयमें आनन्द अशुभ कर्म भी शुभ रूपमें पकट सकते हैं।

यदि शुभ द्रव्यादि की उपस्थिति में भी अशुभ कर्म पकड़ उपमगारि अशुभ रूपमें उदय में आवे तो समझना चाहिए कि यह कर्म मत्ता रूपमें ही क्षीय होने को आया है।

इस प्रकार की विचारणा शुभाशुभ कर्मों के इदमें समझने का सहजमिद उपाय मानी जाना है

—भा० क० ५

आशा का उदय—सुटीला, उंचा, ही उडता
क्या मृग-तृष्णा में पड़ कर, यह बीज मुझे

卐 पांथ की इच्छा

विषय-विचारा की दृष्टि महज म-चाहे कितना है। शाखा का जालिक्र ज्ञान का बोझ मगज पर लादा जाय फिर भी-आंतरिक शक्तियाँ का मोड़ उल्ल बिना निर्मूल नही हो सकता है।

इच्छाओं का वास्तविक उ मूलन तो लोह को लोह से काटने की च्या अशुभ दृष्टियों का रम कर देन वाली आत्मशक्तियों के यथार्थ विकास रूप मुक्ति का प्रबल इच्छा क आविभाव से ही हो सकता है।

“Will is power” अनुभवीओं का यह अनुभवसय वास्तव आंतर शक्तियों क विश्वास की नींव पर बठेवाला प्रशस्त इच्छा कई जन्मों की विरहगामिनी प्रबल कामनाओं पर सरलता पूर्वक विजयिनी हो कर जीवन को ऊर्ध्व गामी बना देता है।

-- भा० ५० ६

卐 मुक्ति की इच्छा क्या?

इच्छा, सामान्य अभिलाषाओं का उठना विचारा क आदर्शन को घनलाता है, अत एव शाखा म जगह २ पर इच्छाओं का निग्रह साधकों क लिए अत्यंत आवश्यक माना गया है।

साध है मोक्ष एवं उसके साधन रूप धर्म और उमक प्रकरों को जीवन म स्पृष्टताय ही नहीं प्रयुक्त उकट इच्छा-अभिगता क योग्य मान गये हैं।

दुःख-सुख की ऑसुमिचीनी-का है ससार बनाया ।
आशा-तृष्णा के रस फिर भी, जगमें सब कोई भरमाया ॥

卐 मोक्ष की इच्छा

प्रिय-विचारों की इच्छा महज मे-नाहें स्निग्ध है। शानों की
शास्त्रिक ज्ञान का बोझा महज पर लादा जाय फिर भी-जान्तरिक
वृत्तियों का मोह बद्ध विना निर्मुक्त नहीं हो सक्ता है।

इच्छाओं का वास्तविक उन्मूलन तो लोक को लोक में कोटन की
-मा अशुभ इच्छाओं का समुद्र देन वाली आमलकियों के यथा-
विक्रम रूप मुक्ति का प्रबल उ-अ क आविभाव से ही हो सकता है।

“Will is power” अनुभवों का यह अनुभवसम
वाक्य आंतर-शक्तियों के विश्वास की नाव पर उठने वाले प्रशस्त
इच्छा कई जन्मों की निरक्षरामिनी प्रसन्न कामनाओं पर सरज्जा
पूर्वक विजयिनी हो कर जीवन को ऊँच गाम्भीर्य बना देता है।

-- मा० ४० ६

卐 मुक्ति की इच्छा क्या?

इच्छा, कामना एवं अभिगमना का उठना विचारों के उ-अ प्रपन
को बतगता है, अतः जब शानों में जगह २ पर इच्छाओं का निग्रह
साधकों के लिए अत्यंत आवश्यक माना गया है।

साथ ही मोक्ष एवं उग्र साधन रूप धर्म और उसके प्रकार
को जीवन में स्पष्टणाय है। नहीं प्रयुक्त उत्कट इच्छा-अभिलाषा के
योग्य माने गये हैं।

दुःख-सुख की आँखमिचीनी-का है ससार बनाया ।
आशा-तृष्णा के बंध फिर भी, जगमें सब कोई मरमाया ॥

विपुत्र सुविधाएँ मिलन पर भी मानसिक शांति का अनुभव नहीं होता है, प्रयुक्त जो नहीं मिला है उसका परित्याग ही धधकना रहता है।

अतः दृष्टि का माध्यम जानियों के अनुभवपूर्ण वचना के आधार पर नियत कर लेना सर्वप्रथम अपेक्षित है।

समस्रदारा और मत्तर्कना से मोचन पर प्रतीत होता है कि -- 'दृष्टि जैसी छद्मि' कहावत के आधार पर अमृताप की आग को नभकानेवाली भौतिक दृष्टि के रहत कर्मा भी उपस्थित न-योग-सामग्री एवं परिस्थितिमें दम धकटा नहीं जा सकता है।

अतः विवेक-दृष्टि को अपनाकर जिस समय जो भी अन्धरी या घुंरी, थोड़ी या ज्यादा, अशुक्ल या प्रतिशुद्ध न-योग-सामग्री मिल जाय उसे मर्दप स्वीकृत कर जीवनमें शांति-संतोष को आने का रास्ता खोल देना बुद्धिमानों का कर्तव्य है।

- भा० कु० ८

卐 समार का सुख कैसा ?

वास्तविक दृष्टिसे देखा जाय तब स्पष्ट रूपमें यह प्रतीत हो कर क रहता है कि -- वगत का दीग्मत्वाला सुख शब्द छिपटी हु तलवार की धार चाटन बराबर क्षणिक और भयकर दुःखमय भरपूर होता है।

उचे बैठे शु षळे ? जो गुण आन्या न होय ।

पैठये देवल शिखर, वायस गरुड न होय ॥

अज्ञानवश मोहमूढ़ प्राणी अपनी निजा धातुगिक शक्तियाँ का मरचा स्वदन न होने के कारण इन कल्पनाजय साक्षात्क सुभा के पड़े लालयित हो पाय-सा बनता है, परन्तु निवेस्तुदि का प्रकाश मिलने पर यह चान धनी भानि समझी जाती है कि सकर त्रिपट कर गये हुए गोबर के लड्डुओं को खान में जो अनुभव होता है वह हा-सार के दीम्बनवाले सुगम होता है ।

अतः समस्यगी के साथ मुख्यक बार में गप्यन न करत हुए यथार्थ मार्ग लेना उचित है ।

-भा० कृ० ९

सुख या दुःख ?

व्यावहारिक सुख-जो कि अर्थ-काम के द्वारा पैदा होता है, हमेशा दुःख-मिश्रित अपकारक एवं दुःखों की अनर्गल परपरावाग होने से वस्तुतः दुःख ही माना जाय, फिर भी सवि-काट मनुष्य को जहर के प्रभाव से नीम के कहने पते भी माठ मादम होत है, इस प्रकार अमान-मोह के कारण जगत का दिग्गमवाग सुख दुःख रूप होने पर भा स्पृष्टणीय मादम पड़ता है

इस पार ऐसा अनुभव होता है कि हरउ ग्यान के बाग जैसे जग का माट्टा गस विनाप स्पष्ट प्रतीत होता है, उम तगह थोड़-बहुत दुःख की उपस्थिति के बाद ही जगत के सुख-मनेहर भा पदार्थ मनुष्य

ज्ञान विनानों मुनि दुःखी, तिम श्रद्धस्थी धन-ही-

उने साधने आलस्य, अमर होवे ।

एव आकर्षक लगते हैं, अथवा चाहे किन्ने भी मुदर पदार्थ उदासीन-
भाव में विलीन हो जाते हैं

एव च किन्ने भी मुदर या उत्तम पदार्थ भोग के पश्चात् उठ
न उठ मित्रि के बहाने के नीचे दुःख रूप धृहर के बीज को मानस
में डोट जाते हैं, जो कि बीज बिना किसी प्रयत्न के भी अपने-आप
बढ़ते हुए जीवों को दुःख के कंकड़ों से भर देते हैं।

इसका मतलब यह हुआ कि सामान्य तथा-कथित सुख के
भाग और पीछे स्पर्श या अस्पर्श आदि या बहुत मात्र में दुःख की
उपस्थिति अनिवार्य है

लेकिन मित्रि में जगत के उत्तमोत्तम पदार्थों के उपयोग
से भी पैदा होनेवाला दुःख यथार्थ में दूर ही है।

अतः एव मात्र का दर्शनवाचक सुख-वास्तव में “सुख है?
या दुःख?” इस प्रश्न के गहरा विचार का ही जीवन में विगम्यायी
आति का हाथ पकड़ कर स्थापित करण का भेद्य विवेकी महापुरुषों ने
दिया है

-भा० ४० १०

पराधिराज का स्वागत

आज का वह पवित्र दिन है कि -त्रिस दिनके जीवन शुद्धि का
महान् पर्य का प्रारम्भ होता है

पहुँचपा नरने पूत्रीए, पहुँचानी बात न एरु।

अध-रुच नर ने खा, नेहनी बात अनेरु॥

अभरुदः भरण, आदर्श सार्धिक-भक्ति, गुणानुराग, चैत्य-परिपाटी (भवन गाँवम रह हुण समस्त जिनालयों को यात्रा), किय हुण पापों की यथाव आलोचना, एव मायश्चित्त आदि कर्मेभ्यः का पाछन कर क जीवन-शुद्धिकारक पश्चाधिराज का सन्ना स्वागत करना चाहिण

(श्रीपर्युषणोपर्य प्रारम्भ दिन)

भा० कृ० ११

करामाती पत्र

(जीव ने मृत्यु के समय पर शरीर को छिरा हुआ द्वयर्धो पत्र)

इस ससार मे मित्रता के गवध को निभानेवाले कइ व्यक्ति अपने स्वार्थ की मात्रा को भी छोड कर सचे दिलस परस्पर मुन्न-दुन्न का स्वधना मे रूपूर्ण भाग लेते ह, जब कि कुछ स्वार्थ-साधना मे तपर एव मानरता के मवध की भी नरनार न रखनवाले पशुवृत्ति-प्रधान प्राणी अपनी मर्जी-दृष्टाजा की पूर्ति होन तक मित्रता बताये ग्वत है, और स्वार्थ-पूर्ति होन की उम्मीद न रहन पर या स्वार्थ-पोषण क बढ़ते में आनेवाले आफता के मौके पर मटस किनारे हो जाते है या सात-पाँच गिन कर छू हो जाते है

इस चीज को समझन वास्ते नीचे का “करामाती पत्र” गभीरता एव समझदारी के साथ पढन की आवश्यकता है

आता है जब काल का शौका, प्राण-तैल तब देता घौखा ।
सकता नही पिसी का रोका, बार बार मिले न मौका ॥

जीवराजमाई और यो समय नन्ददत्त आने हो दिल हो चाने
अपने सहपाठी उगीर को मायिक—रूप से उलझना और करदानी
जन्म करने के रूप कहता है कि —

“प्यारे मित्र ?

आज दिन तक के मेरे परिचय से प्रेमे
बहुत हा नुकसान हुआ है, इतना ही नहीं किन्तु
अत्यन्त लाभदायक और मोक्ष के साधन सद्गुरुओं
का साथ हुआ है, और नरक में ल ज्ञान बाक दुर्गुणों—
की प्राप्ति हुई है, मेरे वास्तव में सभी विषय गयी
जही है, वर' उ रा दुःख का हो काम दिया
है, इस स्वार्थमय दुनिया में सदा स्वार्थ—
साधक और मनःशी मित्र बहुत हल, परंतु सभारों—
त्यागी मेरे जैसा भिन्न कोई ही होगा, मैं मानता हूँ कि मेरी
दुःख-वृत्ति एवं क्षमनाओं की पूर्ति क थाते ही होती,
मेरे पर प्रीति है, इतना ही नहीं, सगे अंत करण की नहीं है,
स्वार्थ—साधक क मन्त्रि भाग्यशाली मात्र सिखावता
है, मेरे जैसे मित्रों के साथ कायशी मिश्रता की
उपजा रहा है, मर इस अन्तिम परमे ही नम त्याग करने हो
हल्का है, मेरे जैसे मकर के समय पूर्ण रूपसे महापता
तन छफी पित्र मया, धर्यो रैन-दिन ध्यान ।
कषट् मिट न वामना, रिना विचारे ज्ञान ॥

न देनेवाले किन्तु उन्हा धैर्य तोड़ कर अथिअ दुःख
 देनेवाले मित्र इस दुनिया में यथचित ही होंगे, तेरे इन
 दुर्गुणा के कारण तू हजार सार शिखार का पात्र है, तथा तेरे कुछ
 कर्तव्यों के फल-स्वरूप कर्मराजा नेरे का मद के लिए यवन
 में डालगा, तू अभी भी यह मत समझ कि बधनों से मुक्त
 कर देगा।

तथास्तु ॥

तुम्हारा यथार्थ प्रेमी

जीराज का ब्यावत्

वासि विचार पूरक गर्तिसे पढिये ' । । ।

इस पत्र के द्वारा चेतनन अपनी स्थाया के प्रति दूर के
 उद्गार निकाले हा, इस पत्र की पढत हा माहम हाता है, पण्णु
 समझारा पण विवर-बुद्धि से चेतनन काया के द्वारा किये
 हुए धर्म-कार्यों की अनुमोदना के रूपम स्थाया को घन्यत्राट
 भी इस ही पत्रमे दिया है, यह कैसे ? इस का समझन वास्त
 इस पत्र की मप-मेम्याक (१-८-८-८-१० आदि) पत्तिये
 ओडते हुए पढत मोडण । । । आप का इस पत्र की
 कगमात माहम हा जायगी.

-भा० क० १२ (१३ का क्षय)

सत दाग और झुमी, पापी क भी घर होय ।

सत-ममागय प्रभु-भजन, ए दो दुर्लभ होय ॥

जगत के नाशहार की पहचान

विश्व में कई प्रकार के प्राणी होते हैं, जिनमें के कुछ वामनाश की तृप्ति का ही ध्येय रखकर दिन-रात परोधान रहते हैं, कुछ प्राणी मानवता के नियमों को कुछ समझकर जीवनमें पशु-वृत्ति का रक्षण की चेष्टा करते हैं, कितनेक आदर्श महापुरुष अपनी नमाम प्रवृत्तियों पर विवरु और सम्यक्-ज्ञान का प्रकाश फैला कर अपनी वृत्तियों का संपूर्ण रूपसंस्कार और पर क हित की माधना करने में लगा देते हैं,

परन्तु जगत के अनन्य प्राणीयों के सत्त्व उद्धारक भीतीयंकर-भगवंत अपनी कन्याण-साधना निष्ठ भी जाने पर भी जिस कल्याण-भाव की छ कर सारे नसार क छोड़-बड़े तमाम प्राणीयों क कन्याणार्थ जो महापश्रिम उठाते हैं, उस की सत्त्वा जानकारी के वास्ते तीर्थंकर-देवों की उदात्त कल्याण-भारना को समझना आवश्यक है

इस के लिए पूज्य उपाध्याय श्री यशोविजयजी महाराज फरमान हैं कि —

“महागाँव महामाहण कहीए,

निर्यामक सत्यवाह ।

उपमा एहरी जेहने छाजे,

ते जिन नमीए उन्ठाह ॥”

इस दुह में तीर्थंकर भगवन्तों को सारे संसार के लिए महा-

सप करे किमत बने, घटे करे मन रीस ।

याय अक मुग फेरवे, रेगठ ना छत्रीम ॥

गोप, महामादण, महानिर्यामक और महासार्धवाह क तुल्य बता कर उन की लोकोत्तर-उपरागिता का परिचय दिया है

इन में की पहली उपमा का यहाँ विचार प्रस्तुत है — जैसे गाला अपम गाय-भैंस आदि पशुओं का पाठन करता है अष्टा घास और मीठे पानीयों जंगलों में चराने का ल जाता है, एवं बाघ, शेर आदि हिंसक जानवरों से बचाता है, इस तरह रुमार क एकन्द्रिय से लगा कर पंचन्द्रिय तक के तमाम जीवा की आरम्भ-मरण-आदि द्वारा होनेवाली विविध हिंसाओं से भयमा माओं को बचा कर नये कर्म के बंधनों से बचाते हैं और आत्मा क सचे विज्ञान के अनुकूल साधनों का जुटाव कर देते हैं, तथा अज्ञान-अशिवक द्वारा होनेवाले विषम कर्मों क हिसक आक्रमण से बचाते हैं, इस तरह रुमार रूप उजाड़ जंगल से पार उतार कर मोक्षरूप हर-भर जंगल में भयमा मा रूप पशुओं को ले जाते हैं

इस लिए श्री तीर्थकर दोनों का “महागोप” कहे जाते हैं

इस प्रकार रुमार के तमाम प्राणियों का सचे मार्ग पर चढ़ाने वाले तीर्थकर परमात्मा के अद्भुत-लोकान्तर व्यक्तित्वको समझ कर उनके प्रति अपने कर्त्तव्य की जवाबदारी अदा करने वाले प्रयत्नशील होगा प्रत्येक विवेकी का पवित्र कर्त्तव्य है

—भा० कृ० १४

स्त्री पीयर नर सासरे सजमिया सहवास ।

पग पग होये अलखामणा, जो माटे थिरवास ॥

॥ श्री श्री कर मंगलानी श्री को सर उदयमा ॥

॥ श्री श्री कर मंगलानी श्री को सर उदयमा ॥



श्री श्री कर मंगलानी श्री को सर उदयमा ॥

॥ श्री श्री कर मंगलानी श्री को सर उदयमा ॥

— श्री श्री कर मंगलानी श्री को सर उदयमा ॥

(देखो पृ ५९)

॥ श्री श्री कर मंगलानी श्री को सर उदयमा ॥

॥ श्री श्री कर मंगलानी श्री को सर उदयमा ॥



श्री श्री कर मंगलानी श्री को सर उदयमा ॥

श्री श्री कर मंगलानी श्री को सर उदयमा ॥

॥ श्री श्री कर मंगलानी श्री को सर उदयमा ॥

— श्री श्री कर मंगलानी श्री को सर उदयमा ॥

(देखो पृ ६९)

विशेष की प्रतिष्ठा

जिस प्रकार दुर्लभ शरीर में रुद्ध तरह की बाधाएँ जरा-सा निमित्त या घर उठनी रहती हैं उस तरह अपनी आंतरिक शक्तियों के विनाश के अभाव में बुद्धता, बुद्धबुद्धि एवं विवेक-शून्यता के कारण बाह्य जगत के साहजिक नानाविध परिवर्तन के प्रभाव में व्यावहारिक रूपसे निमित्त रूप होनेवाली व्यक्तियों को अपना दुर्गम मानकर उनसे बदला लेना ही वृत्ति हो कर अन्यों की परंपरा में अपने-आप ही अज्ञानी जीव पैदा जाता है

अपनी इस अक्षम्य गतियों को सुधार दिना व्यावहारिक शक्तियों को परास्त करत रहने का खटपट में पड़ना मचमुच भयकर अज्ञान है

इस अज्ञान को पट्टे को हटा कर जीवन में आचार-बुद्धि, परम अनर्निराक्षण-वृत्ति के द्वारा विवेक की प्रतिष्ठा करना मुमुक्षुओं का उदात्त कर्तव्य है

-भा० कृ० ०))

समझदारी का नमूना

आश्चर्य की बात है कि —मारा ही सत्कार प्रगल्भा सुनने को तैयार है, पर निंदा सुनने को नहीं, रस्तुतः प्रशंसा सुनने का उसे ही अधिकार है जो कि अपनी निंदा खुले दिख से सुनने का तैयार हो ! जैसे कि दुकान में भागीदारा रखने के बाद उस में मे

जुँठ सगु कोई पाप नहीं, लोम पाएनो बाप ।

सत्य समो कोई धर्म नहीं, निंदा मोडु पाप ॥

मुनाफा लेने का उसे हाँ पूरा अधिकार है जो कि नुक़्त्यानी म
भा हर तरफ़ से तैयार हो॥

अतः अपने दोषों का संगोधन करनेवाली निद्रा को भी अपना
जख़्मी ह

—भा० सु० १

शांति-आनन्द पाने की कूँची

यदि किसी मनुष्य को किसी विषय में लाभ अधिक हो और
उसकी आशा (तृष्णा) कम हो तो उसे आनन्द-की मात्रा कम
होती जायगी।

शांति-आनन्द को पाने का सीधा तरीका है आशा कम
करना या लाभ बढ़ाना, और लाभ अपना बढ़ाया नहीं बढ़ता
है—यह तो बढ़ेगा आशा की मात्रा बहुत कम होने पर आम शक्तियों
क मौलिक विकास से अपन-आप ही।

अतः आशा-तृष्णाओं को कम कर के शांति-आनन्द सरलतः
पूर्वक पाने का प्रयत्न करत उचित है।

—भा० सु० २

लोकोत्तर महापुरुषों की पहचान

इस अवसर्पिणी-युग के आद्य चक्रवर्ती और श्री कृष्णमन्द
भगवत् के आद्य पुत्र श्री भरत महाराज ने अपनी विवेक-बुद्धि

घनशकु काटा लगे, खमा करे सद्गु कोय ।

निराधन झूगर से पडे, वो बात न पूछे कोय ॥

का जागृत रखने का निष्ठ व्यग्रस्थित रूपसे तैयार निये हुए आदर्श महापुरुष जिस तरह "जितो भवान् ! वर्द्धते भीमस्मान्मा हन् !!!" जन्म से भारत-महागज को हितकर उद्बोधन करते थे, एवं व जहाँ-तहाँ होनेवाली हिंसा को "मा हण मा हण" जन्म से रोकने की चेष्टा करने थे—(ये ही लोग आगे चल कर माण्ड (मान्डण) सस्था के उपादक हुए)

इस तरह लाकात्तर-उपकारी श्री तीर्थकर-परमात्मा भव्यामाया का उद्देश्य कर क निरन्तर घोषणा-पूर्वक रह रहे हैं कि —

(अ) "मा हण ! मा हण ! " किसी जीव की हिंसा मत करो !!! "

(आ) "क्षय्य जयणा (उचान की तपयता) आर विवेक वृद्धि के समन्वय से अनन्य दृढ (निःप्रयोजन हिंसा) का सर्वथा त्याग का के अर्थद्वय (मानुस से की जानेवाली हिंसा के) क्षेत्र में भी सकीर्ण करते रहो !!! "

इस महापवित्र संदेश को सप्ताह क नमाम प्राणीया को सुना कर श्री सार्धकर भगवत मुदकी लोकोत्तर महापुरुषोचित भाव-श्रुणा क परिचय दे कर अपनी महा-माण्डण उपमा को सार्धक करते हैं

इस प्रकार सार्धकरा का लाकोत्तरता पहचान कर उनके विशिष्ट व्यक्तित्व का सदगुणा के विकास क द्वारा अपन जीवन में उतारन का सन्तुष्ट करना जल्दोरी है

—मा० सु० ३

तप विण नवि याये, नाश दुष्कर्म के० ।

तप विण वि टले, जन्म-मरणनो के० ॥

क्षमापना का महत्त्व

आज पर्वधिराज श्री मवत्तमरी-महापर्व का पवित्र दिन है,

पर्युपणना-पर्व के सात दिन की आगधना आजकी आराधना

को सफल करने के लिए हो है

अज्ञान एवं मोह-माया के विषम-स्फुरार की जाल म फँस-कर
 कुछ नानिष्ठक पदार्थों के निमित्त से उठनेवाले विषय-विकार एवं
 कषायों के मल को-शुद्ध-परिणाम और सच्ची समझदारी के साथ
 गन्तीयों के मने दिलके इकरार के बलमे-दूर करने की सफल
 चेष्टा आज की आगधना का रहस्य है

मायत्सरिक-प्रतिक्रमणका भी मतलब यह ही होता है कि—

“जोड़न का पापा के मार्ग से पीछा हटा कर पुन उस मार्ग
 पर जीवन चला न जाय इसी विचार एवं भावारा की शुद्धि धनाये
 गगन का प्रयत्न करना”

फरक आज का प्रतिक्रमण करके चाहे कैसे भी भयकर रूपमें
 अपना व्यावहारिक नुकसान करनेवाले कहे दु मन के प्रति भी सचे
 दिल से मैत्रा-भाव के रूपमें यथार्थ क्षमापना का महत्त्व समझ न
 आता है

इस प्रकार आदर्श-क्षमापना का अपना कर आजकी आराधना
 सफल बनानी चाहिए

सप्तसरी महापर्व दिन

— भा० सु० ४

बापा वृ बाध्या मिले, छटे कौन उपाय ।

पर सेवा निर्ग्रह की, पलमें दीये छुड़ाय ॥

पर्वोद्धाराज की स्मृति

आज का दिन गत पर्युषण-पर्व की आराधना का स्मृति-दिन माना जाता है

जैन-शास्त्र की प्राप्ति पर आराधना के मुख्य फल रूप आंतरिक विचार-परिणति की निर्मलता बनान और उसे टिकान के लिए आराधक आत्मा को हमेशा अपनी आराधना एवं उसके पीछे रहा हुआ मनोवृत्ति को रटोल्ने रहना चाहिए कि—“आराधना करने के पूर्व मेरी अवस्था कैसी थी? किस प्रकार इन वृत्तियों में शक्य परिवर्तन हो सके?”

आज की दुबली-आठम अपन को यह ही सूचित करती है कि—पर्युषण-महापर्व की आराधना द्वारा रामादि-निकारी में कितनी शौगता हुई? शरीर की दुर्बलता की अपेक्षा वृत्तियों एवं अपनी क्षमताओं के दुरुपयोग की मात्रा दुर्बल होना जरूरी है

इस आशय में आज की आराधना द्वारा पर्युषण में की हुई आराधना का हिमाश लगाना प्रत्येक विवकी का कर्तव्य है

—मा० सु० ८

स्थ-यात्रा का महत्त्व

धर्म की आराधना का वास्तविक फल अपना कल्याण-साधना के

पाठमी निदा जे करे, कूडा दवे आल ।

मर्म प्रकाशे परगना, तेथी मलो चढाज ॥

उपरात जगत के अन्य प्राणियों का भी मर्चे गइ पर न ही मर्चे,
नमाम धर्म-क्रियाओं में यह आशय मुख्य होना है

अतः धर्म की प्रशारणा के उद्देश्य से निकाल जान वाले स्थयात्रा
के परिवार कार्य में प्रिलिप्त रूपम आन्तरिक भावनाओं का चूंगन बत
का होना जरूरी है

वास्तव में स्थयात्रा का महत्त्व जगत का अज्ञान के महान्
अंधकार में निकाल कर आने शक्तियों के विकास के पथ पर लगेवाले
महान् उपकारा श्री-वीनारागभगवान् के मने स्वरूप को जगत के
बाल जीवों के समक्ष उपस्थित करने में है

सम्राट् सप्रति और मोगल-सम्राट् अकबर के दिल में स-मार्ग
सृष्टि की अमर 'यत्तु' ही २४-यात्रा के उत्सवों से पैदा हुई थी
ऐसे महा-व्यापक स्थयात्रा के द्वारा जगत को परिवार बान
वास्त प्रत्येक धर्मप्रेमी मुमुक्षुओं को जीत छिड़ करने का पाठ्य
करना जरूरी है

(अ) वातराग के आदर्श गुणा का समान वाला मधुर स्तुति,
भजन, पर उत्तम कर्तन आदि का कार्यक्रम करने हुए वीनाराग के
प्रति आर्त्ति थड़ा व्यक्त करना

(आ) याग-मार्ग के प्रचारक नीर्योग के लोकोत्तर-स्वरूप को
महिमा को ध्यात में रख कर भगवान् की पाण्ड्या आदि शुद्ध वष

पर अवगुण सरमव समा, निज अवगुण मेरु समान ।

तो का निंदा करे पारकी ? भूख ! आण निज मान ॥

पहन कर किसी प्रकार की लज्जा न रखत हुए भक्ति-भाव के साथ स्वयं उठाना

(३) चून, बुट, चपड़, मटल आदि नमाम चीजों का त्याग, तथा बीनगंग के उपसकर के नात अपनी विशेष-बुद्धि की जाहूनि, धय बाडो पान आदि को त्याग कर सुख-शुद्धि एवं व्यसहित रूपस प्रिय-भक्ति आदि शिस्त-मयादाओं का यथायथ पालन

(४) भगवान का पालखी घर या दुकान के आग आवे तब घर आतर के साथ यथा-गति में चढ़ा कर गहूँला आदि कर के गौराग का यदुमान करना

(५) बीनराग की बानगंगता और विधनमल्ला ध्यान में रखत हुए अनंत उपकारी तायेंकर दय परमा माया के प्रति सखा वृत्तभाव प्रगट करन वाले आमा प्रभावना पोषक मित्रि सखना से मययात्रा के जुलस को समृद्ध बना कर बाल-बीन का यन्मार्ग-प्रेमी बनाना

यसे अनक कर्नव्या का गुरु-मुख से समझ कर विवेक के साथ उनका गान्न करन से स्वर-वन्थाणकारी, आगन-प्रभावना-वर्द्धक मययात्रा कार्यो से आदर्श गम उठा सकना है भा० सु० ९

सदा याद रख्यो !!! (२)

० वि-मद-विरक और शुभ निष्ठा इन दो चक्रों के आधार पर ही जीवन-रथ आसाना से उन्नति में गस्ते बन सकता है

परमपणो मैं एक छे, जिम न बाधे धर्म ।

पद धर्म जाण्यो पट्टी, मिष्ट सवि धर्म ॥

० कि—मर्णाई और ईमानदारी की परीक्षा विषम—ग्रन्थ में
ही होती है

० कि—जीवन—रूप नाव में इच्छा का छेद पड़ जाने पर वह डूबने लगती है, और समझदारी के अभाव में बैर—विरोध, झपट्टे और टटेबाजी के पहाड़ से टकरा कर चूर—चूर हो जाती है

० कि—हरदम अपना हैया टटोलने लहो कि—“हम क्या कर रहे हैं? और रास्तर में “क्या करना चाहिये?”

० नीचेकी चार बातें सदा याद रमा।

बोलो कम	करो ज्यादा
बोलो कम	मोचो ज्यादा
बोलो कम	देखो ज्यादा
बोलो कम	दुमरोंकी बोलने का मौका ज्यादा दो.

—मा० सु० १०

जगद्गुरु की स्वर्गतिथि

आज का दिन यह है कि—जिन दिन अपा जैसे मूढ़ आमाभा की भी भ्रम आराधना के मार्ग पर चढ़ा कर जगत का सधा उद्धार करनेवाले स्वामधन्य पू जगद्गुरु आचार्यदेव श्री विजयहीर सूरेश्वरजी म. न अपनी व्ययम—यात्रा की सुभग समाप्ति कर के नखर देह को छोड़ कर स्वर्ग के प्रति प्रयाण किया था

जैसे तो आज की तिथि अपने प्राण—प्रिय तारकधर्म महान् आचार्य का वियोग कराके अपने को शोक पैदा करनेवाली है, परंतु

घर घर राजा ना बजे, कहत पुकार-पुकार।

महु बिसारे पशु भये, पदत चाम पर मार॥

नय-सापेक्ष शौचिन-शामन की प्रणालिका को समझनेवाले महानुभावों
 के लिए स्व-दर-क-याण की मरबक साधना कर के जीवन को धन्य
 बना कर पंडित-मरण को उध-दशा पानेवाले महापुरुषों की स्वर्गतिधि
 भी सुमुमुक्षु-जीवों के दिव्य लक्ष्युत धर्म-प्रेम्णा को स्मृति पैदा करता है

अतः नीचे लिखी बातों को पढ़ कर जीवन को आदर्श-पौंदर्य
 आचार और विचार से सुदृग्ग बनाते ही चेष्टा करना जरूरी है

५ जगद्गुरु आ० श्री विजयहो-श्रीभारती महाराज के
 जीवन-वचन

वि २० तिथि स्थल घटना

१५८३ विगसर सुदि ९ सोम को पालनपुर में जन्म

१५९६ कार्तिक वशी २ सोम को पाटण में दीक्षा

(१० वर्ष ११ मास ८ दिन का उमर)

१६०७ में २४ वें वर्षम पंचाम पद

१६०९ में २६ वें वर्षम बाचरु पद

१६१० में विगेही में आचार्य पद

१६११ में पाटण में आचार्य पद महोदय

१६२२ में गण्टनायक पद

१६२९ में जेट बिदी १३ को मोगल-सम्राट् अकबर का प्रथम
 धर्मोपदेश

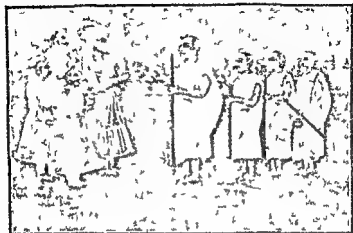
१६३९ से १६४२ तक मोगल-सम्राट् को धर्मोपदेश

१६५२ में माट्रपद सुदी ११ को ऊना (सौराष्ट्र) में स्वर्गवास

लाख चोराही योनिषा, फिर = लीयो अरतार ।

एकेंसी योनि बली, अनंत अनती बार ॥

जगद्गुरु आ. हीरविजयमूर्ति और सम्राट अरुण



मूर्तिजी की कठोर तपस्या

- | | |
|--------------|-----------------------|
| ० ३०० उपवास, | ० ३६०० उपवास |
| ० २२५ छह, | ० आबिल से रीशम्यानरु |
| ० ७२ अहम, | पकी आराधना |
| ० २००० आबिल, | ० गुरु म की आराधना के |
| ० २००० नीरी | रास्ते १३ माम तपसाम |
| | एक सणा-आरेल आदि |
| | ० २२ भास योंगोदहन |
| | क्रिया आदि |

दमन मय जान हा, थिर न रहे सवि कोय ।

इस्पुं जाणो मद्र फाजीण, दिगडे विमासी जोय ॥

फल-प्राप्ति के लिये अधीर बनाती है। स्वाभाविक रूपसे फल-प्राप्त करने का सही तरीका उसे मुहाता नहीं है, माथ ही एक ही फल पाकर उसमें तृप्त रहना भी उसे वैचता नहीं है। वह तो सदा एक के बाद दूसरा और दूसरे के बाद तिसरा इस प्रकार अनन्त फलों को अनन्ततापूर्वक जन्दी जन्दी पाने वास्ते संसार के व्यापारीयाँ की ज्यों डावाडोल-मनोवृत्ति के चक्कर में फँसने में राजी होता है।

अतः विवेक-पूर्ण आधुनिक शिक्षण की विधियों को हटाने का मयत्न करना उचित है. —भा० सु० १२

महा याद रकरो!!! (३)

कि—इन्सान की हुशियारी बुर कामों में निपुणता हासिल करने में या अपना स्वार्थाघता से दूसरा का प्रभावित करने में नहीं है, पर 'सुख के जीवन की ओट—बड़ी तमाम प्रवृत्ति द्वारा दूसरों को ज्ञाति पहुँचाने में है।

■ कि—विनय, विवेक और सदाचार के बंध पर सुख—शान्ति और समृद्धि की इमाग्न का सच्चा सर्जन हो सकता है।

■ कि—जिना योग्यता के मिलन वाली सत्ता का दुरुपयोग यह ही अवनति का मुख्य मार्ग है।

—भा० सु० १३ (प्रथम)

दोष दोजे निज कर्मने, जिज नहि कीधो धर्म।

धर्म बिना सुख नहि मिले, ए जिनशासन मर्म ॥

महानियामक

॥ श्रीचक्रमगदन्त्री लोकोत्तरवर्णने ॥

॥ श्रीचक्रमगदन्त्री लोकोत्तरवर्णने ॥



ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

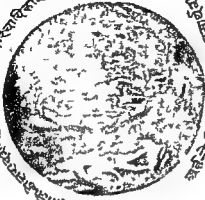
॥ लिङ्गमगदन्त्री लोकोत्तरवर्णने ॥

॥ श्रीचक्रमगदन्त्री लोकोत्तरवर्णने ॥

महासाधनार्थवाह

॥ श्रीचक्रमगदन्त्री लोकोत्तरवर्णने ॥

॥ श्रीचक्रमगदन्त्री लोकोत्तरवर्णने ॥



ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

॥ लिङ्गमगदन्त्री लोकोत्तरवर्णने ॥

॥ श्रीचक्रमगदन्त्री लोकोत्तरवर्णने ॥

सदा याद रखो!!! (४)

० कि—जाश, भय और कामना का उद् कर जो काम किया जाता है उसका मुद्द पत्र अत्यन्त मिलता है

० कि—जीवन की मुद्द के वाले अद्द। मात्तरिक मद्गुणा क विकास के प्रति व्यववाही करते हुए मात्र बाग्राइवर रूप दिव्यारटी दान, दया—भादि कर्तव्यों में अपन का मद्गुणा का निधान समझ देने जैसी भयका—अत्यन्त कंद् मन्त्री नहीं है

■ कि—विचार और आचार का समन्वय करने वाला हर प्रवृत्ति में विवेक और प्रवर्तिनीधन का उपयोग करने हरना जरूरी है
मा० सु० १३ (दिनीय)

सीधंकरों का उपकार

मोद्—मूद् प्राणी नानाविध अज्ञान—मूदक प्रवृत्ति करके जीवन को विषम—समस्यामय बना देते हैं, उन्हें स—मार्ग पर ला कर ज्ञान के उद्भव प्रकाश में अपन कर्तव्य का मान कमनवाले भी सीधंकर देव परमात्मा के शब्दार्थित उपकार की मात्रा समझने क लिए शाश्वतार—मगर्ता न एक रूपक इस तरहसे समझाया है कि—

‘जिस तरह महा—समुद्र के प्रवासी को जलान की मनरूताई जितना आवश्यक है, उसी तरह जहाज चटान वाले निपुण मगामी

आठ कन्या काडी कचन, तजी जेणे बल्ली दू।

यपर स्वामी ते र्शीए, नित उगमते सूर।

और मुझारी की अयावश्यकता है चूंकि —हमियार जहाज—चाटक के बिना मुट्ट भी जहाज समुद्र के पानी के भीतर छिपे रह यह २ भेंवरो के चक्र म फैस कर या पानीम रह। गेटी—बड़ी पटाडीया से टकरा कर धूर-धूर हो कर नष्ट हो जाता है, और शायद पैसा नहीं मा हुआ तो भी निपुण जहाज—चाटक के बिना जहाज क्षीयता से समुद्र को पार नहीं कर सकता है

इस तरह ससार—रूप महासमुद्र म अज्ञान—विध्यात्व आदि के गहन कूहर के कारण उमार्ग पर चटे गये एव विषय—रूपाय के तुफान म फैस कर अपनी चाल से हट कर डोंगाडोत्र स्थिति में झूलन वाले ममार। जाओ के जीवन रूप जहाज को तीर्थकर—परमात्मा सम्यक्ज्ञान रूप मुफान की व्यवस्था जमा कर एव च सम्यक्दर्शन और सम्यक्—चारित्र के सहयोग रूप विजिष्ट हशियारी से बिना जोगम के त्रे—नटक भयममुद्र के सामने किनारे मुक्ति रूप महानगर म बड़ी दुगलता—दूरक पहुँचा देते है

अतः श्री तीर्थकर देव परमात्मा -पार के तमाम जीवा के महान् उपकारी है, इस उपकार को व्यक्त करन वास्ते आशो म उ हे 'महा-निर्यामक' कहते हैं (निर्यामक=जहाज को व्यवस्थित चलावेवाला)

भा० सु० १४

नञ्वाणु सुर तणी. निव नित होय निर्माल्य ।

नरभर सुर सुख भोगवे, ते शालिभद्र कुमार ॥

विश्व के मरत्यक

पुर्गतन काल में धन-समृद्ध व्यापारी लोग पुण्यार्थ एवं व्यापार-कुशलता की सफलता के शुभ-उद्देश्य से दूर-सुदूर देशों में व्यापार-यात्रा का आयोजन करते थे, जिसमें अनङ्ग साधन हीन वणिक्पुत्रों को अनङ्ग प्रकार की सुविधायें दे कर अपन साध दूर देश में ले जाते और गम्ते के नानाविध कष्टों से बचा कर अपनी साधन-नपत्ति का सदुपयोग करने और जंगलों की निरुद्धता, डकैतों का उपद्रव एवं सफर की कठिनाई के कारण धनोपार्जन के लिए देशांतर गमन करने की ताव दृष्टा को मन ममोम कर ज्ञानशाल कद आध्यात्मीनों को ये उदार-चरित व्यापारी अपनी शक्तियों का समुचित लाभ देते

अन एवं ये लोग प्राचीन काल में राज्य-तंत्र के मन्त्रालय-राजा-महाराजाओं के द्वारा सार्वभौमिक को मानप्रद उपाधि से विभूषित किये जाते थे

इस प्रकार इस जीवन-यात्रा में अत्यन्त जरूरी मन्थरु श्रद्धा, परार्थ ज्ञानकारी एवं समुचित सदाचाररूप महामूली सम्पत्ति दे कर तथा राग द्वेष, निषम-वासना, मिथ्याप्रद आदि लोभों से एवं जन्म-जरा मरण आदि हिमरू पशुओं से बचाकर ससार रूप जगल में से योग-श्रेय की कुशलता पूर्वक भव्य जीर्ण को पार उतारन वाले तार्थकर परमात्मा विश्व के प्राणीमात्र के संरक्षक हो कर उन का लोकोत्तर आत्म

गुण कीर्षा माने नहीं, अरुण माही मूल ।

ते नर मगति छाडीए, पग पग मादया रूख ॥

शक्तियों का परिचय शास्त्रकारों ने महासार्थब्राह्म की उपमा से श्री
उपासकदशा आवश्यक-निर्गुक्ति आदि आगमा में दिया है

उस समय हर तीर्थंकरों के प्रति मन्त्री कृतज्ञता एवं आदर-भाव
व्यक्त करनेवाली उन की पूजा-भक्ति आत्मिमें समर्पण भाव से लगे रहना
परम कर्त्तव्य है

—मा० सु० १५

सदा याद रखो!!! (५)

० कि -हर आदमी अपनी ही बुद्धि के पैमाने से हर चीज
को समझने का चेष्टा करता है पर 'अपना क्षुद्र-शक्तियों का यथार्थ
मान हो कर नस्तु के यथार्थ स्वरूप को न समझ सकने की खुद
की कमजोरी व भी भी अपने-आप महसूस नहीं करता है

० कि -ममप्रदारी की सचाई का सनातन मानन्द यह
है कि -गुद के विचार एवं मान्यताओं का कदाग्रह न होना

■ कि -नगत के क्षणिक सुख एवं हमारे पदार्थों के पीछे
अमानता का नितनी अपनी दौड़-धूप है, उसका अन्त भी यदि विवेक,
और यथार्थ समझदागी के साथ आम-हित के प्रवृत्तियाँ में लगावे तो
सच्ची शांति पा कर के ही रहेंगे

—आ० क० १

सज्जन दुर्जन जानिए, जब मुख बोले बाण ।

सज्जन मुख अमृत लवे, दुर्जन पिपनी खाण ॥

धर्म क्रिया क्यों? और कैसे?

ज्ञानी भगवत्परा न धर्मही आराधना से आदि पाठ के अन्तुम-
स्वागत का हूँम होना आवश्यक बताया है परन्तु धर्मही आराधना
क समय यदि पूर्ण विरक्त पर्ये वर्तमान में मायापानो १ गयी नाय तो
धर्म का आराधना क फल-स्वरूप अनन्त सांसारिक-कामनाओं क
रूप म पुनः अन्तुम-स्वागत की पूजी बढ़ती चली है जिसमें तो
“लने के देने पर जाने”-की चो या “छेने गई पूर हो गयो
चैठी समझ” वाली बात ज्ञान में वर्तित हो जाती है

अन क-याण-कामा सुमुभु धर्म-प्रेमी आनाओं का परिग्र
हल्य होना है कि -हर कोई छोटी-बड़ी धर्म क्रिया के आशयन के
मनय पूर्ण जागृति गला ह्य ह्यम यह सोचो रहना जरूरी है
कि -“मेरी धर्म-क्रियाओं का व्यावहारिक-जीवन में क्या
प्रभाव पैदा हुआ? एर मेरे विचारों में मत्प का प्रतिभास
किटना हुआ?”

यह बात तब ही अभिहित हो सकती है जब कि -हर धर्म क्रिया
को करने समय नागरिक भगवत्परा ने उस क्रिया के करने की ओ
पडति-दंग या विधि का प्रतिपादन किया है, उसे रचाने में एर पर
योग्य रूपसे यथाशक्ति धर्मक्रियाओं की प्रवृत्ति करने को तैयार बने

माया सुर ससारमां ते सुख सही ए असार ।

धर्म पमाये सुख मिले, ते सुख नाये पारण ।

प्रत्येक धर्मक्रिया विधि का पूर्ण उपयोग एवं अत्यंत आदर के साथ पुराने अशुभ मंत्रारों की निमारी हठाने रास्ते अत्युपयोगी रामनाम औषध के आसेवन की ज्या बड़े प्रेम के साथ अंतर की शुभ-निष्ठा का बल दे कर विविध आत्मशक्ति की तात्कालिक प्राप्ति का संप्रयत्न ही उन्नति के पथ पर बढ़ानवाला धर्मक्रिया का यथार्थ आचरण कहा जाता है

—आ० कृ० २

आ यात्मिक रामायण

आत्मा—रामचंद्रजी है,
सम्यक्त्व—जनक महाराज है
मोह—राज है,
मन—पाताल देश है,
संसार—समुद्र है,

रिवेर—लक्ष्मणजी है,
समता सीताजी है,
धर्मप्रेम—हनुमान्जी है,
तृष्णा—लंका नगरी है,
धर्म की आराधना—रामसेतु है,

अर्थात्—आत्मारामभाई रूप रामचंद्रजी की समता रूप सीता (जो कि सम्यक्त्व रूप जनक—महाराज की पुत्री है) को मोह रूप राजा उठा कर तृष्णा रूप लंका नगरी में ले जाता है

तब धर्मप्रेम रूप हनुमान्जी की सहायता से धर्म की सुद्ध आराधना रूप रामसेतु के द्वारा संसार—समुद्र को पार कर क शुभ अ यत्नसाय रूप वानर द्वाप के विवाधरों की सेना की मददसे

को दिन भर कपूर तू, भावत नहीं लगार ।

को दन रोटी कारणे भगतो घर घर बार ॥

विवेक-बुद्धि रूप लक्ष्मणजी भाग्यवत मोहरूप रावण को मार कर अपनी समता रूप सा को पा कर के आत्मारामभाई रूप रामचन्द्रजी परम-आनन्द के मोक्ता बन जाते हैं

आत्मा रूप रामचन्द्रजी को अपनी समता रूप सत्ता को पाने में मोहनीय कर्म के क्षयोपशम से पैदा होनेवाले शुभ अव्यवसाय रूप बानरसेना का और धर्मप्रेम रूप हनुमानजी की अत्यधिक उपयोगिता है

मोहनाय कर्म के क्षयोपशमसे पैदा होनेवाले शुभ अव्यवसाय को बानर-सेना का रूपक इस लिए दिया है कि—ये अव्यवसाय आत्मशक्ति की प्रगटता या हानता को ले कर क्षण-क्षण में बदल जायें चपट-अनिचपल हुआ करते हैं, एक-से अव्यवसाय सदा किसी के भी टिकते नहीं, पलक-भरमें नरक-स्वर्ग और मोक्ष का भूमिका तक प्रसन्नचन्द्र राजर्षि को ले जानेवाले ये मोहनाय-कर्म के अव्यवसाय आत्मारामजी और विवेक-बुद्धि नरक और धर्मप्रेम रूप हनुमान्जी की देखभाल के बिना समय २ पर अपनी करत बद्दलत हुए त्रिविध परिणाम पैदा करते रहते हैं

अतः इस आध्यात्मिक-रामायण को समझ कर अपने मोहनाय-कर्म के सच्चे विजय वारते प्रयत्न-शाल होना जरूरी है

—आ० क० ३

कीर्षा कर्म न छुटीड, जेहनो विषमो बध ।

ब्रह्मदत्त नर चण्ड, सोल बरस लगे अघ ॥

श्री नमस्कार महामन्त्र का जाप क्यों? और कैसे

जनन—उपभोगी नाशिका का हितकर यह उपदेश है कि—

जैन-धर्म के सम्कारों से प्रभावित कुल में जन्म लेना अर्थात् आत्मशक्तियों को जागृत करने वाले कर्म कस के तैयार होना

इस चीज की मकल सिद्धि पाना ही श्रावक-कुटुम्ब में जन्म लेने की सार्यस्ना है, और यह काम तब ही सुसुधु—श्रियों के जीरा में निद्व हो सकती है—जब कि अपनी आत्मशक्तियों के असंग्री स्वरूप को दश कर गेडे हुए कम के सामर्थ्य को पहचान कर उसे मोहन वास्ते सन्धे दिव का पुण्याय किया जाय, परन्तु बिना साधन के अनादिकालीन कर्म—शत्रुओं को कैसे हटाया जाय ।

अतः अपनी आत्म-शक्तियों की गवार्थ पहचान एवं सिद्धि कृपणाला श्रीनमस्कार महामन्त्र रूप उद्वह हथियार ले कर निवृत्ती साधक आत्मा को अपने जीवन का मौलिक सम्पत्ति कर्म—शत्रुओं के कजेम से हस्तगत कर लेना चाहिए

बिना हथियार के कुत्र योद्धा भी रण-मैदान में गया कर सके । अन श्री नमस्कार महामन्त्र के समगण रूप दिव्य—भक्त को उपयोग की जागृति पूर्ण काम में लाना आवश्यक है

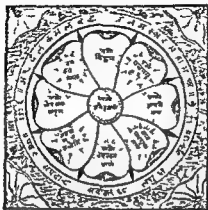
श्री नमस्कार महामन्त्र का जाप अनक प्रकार से किया जाता है, परन्तु योगशास्त्र आदि ग्रन्थों में अष्टदल—क्रमल के रूपमें श्री नमस्कार—महामन्त्र का जाप सर्वश्रेष्ठ बनाया है

पाच पांडुर अतुल्यली, ते भम्पा अनवाम ।

महापुरुष जगमां बली, निराहार वारे मास ॥

योगशास्त्र (प्र ८ श्लो-३३ से ३६) में निर्दिष्ट

श्री
अष्ट-
दल-
कमल
वर्ण-
वद



श्री
नव-
कार-
महा-
मंत्र-
विष

अष्टदल कमल आप का माहात्म्य

विशुद्धया चित्तयन्तस्थ, शतमष्टोत्तर मुनिः ।

सुज्ञानोऽपि लभेतेव, चतुर्युतपम फल ॥

श्री नवकार-महामंत्र का अष्टदलकमल का रूपम मन, वचन और वाचा की शुद्धि पूर्वक गङ्गामौ आठ बार जाप करनेवाले मुनि म्वाते-पति भी चतुर्युतपम (एकसना, उपवास और प्रकासना) उपवास का लाभ प्राप्त कर सकत है

(श्री योगशास्त्र प्र ८ श्लो. ३६)

बुँद समाना समुद्रवर्ष, ज्ञानत है सब कोय ।

समुद्र समाना बुँदमें, जाने बिगल कोय ॥

मेरे महाशक्तिनिधान दिव्य अश्व को पान के बाद उस के जाप के समय हृदय इस चीज को ठीक ध्यान में रखे रहना जरूरी है कि - "मेरी ज्ञानादि अनंत शक्तियों को दया कर बैठे हुए कर्मों के आवरण को हटाने वास्ते इन महामहिमाशाली पंच-परमेश्वरियों का पवित्र आलम्बन ले कर आत्म-स्वरूप के मन्चे भागों जागृत करने का मेरा यह सत्पुरुषार्थ है

इस चीज का यथोत्तर विचारणा के विकास में और तदनुसार जीवन का मूल-शक्तियाँ का व्यावहारिक सकलता में ही आभय-कल्याण की अपूर्व मिद्धि है

इस प्रकार का भी नवकार महामंत्र का जाप जीवन को पवित्र बनाता है

-आ० कु० ५ (४ का क्षय)

सदा याद रखो ! ! ! (६)

० कि - मेरा जीवन पशुआ के तुल्य केवल स्वार्थवृत्ति का पोषण में बीत रहा है ? या जीवन की वास्तविक स्थिति को पहचान कर आदर्श परमार्थवृत्ति के विकास के वास्ते मैं कुछ कर रहा हूँ क्या ?

० कि - विचार के साथ प्रवृत्ति कर देने की मूर्खता से ही जगत् के तमाम छोटे-बड़े तमाम दुःख पैदा होते हैं, परन्तु विचार

सबजन द्वारा ही मला, जीवन दे ससार ।

द्वारा दरिये जायगा, जीता जपकी लार ॥

और प्रशुति के बीच विवेक का गणना लगा देने से उचित-अनुचित प्रवृत्तियाँ का बंधार्थ मान हो कर हुआ पैदा करनेवाले अनुचित प्रवृत्ति जीवनमें से धीरे हटती जाती है

० कि—“आचारः प्रथमो धर्मः” का मूल अर्थ में उल्लास कर जानी हुई सांख्यिक बातों के द्वारा जीवन को परिवर्तन करने वाले यथाशक्य प्रयत्न में सदाचार के तरफ आगे बढ़ने कहते हैं जइसा है

० कि—मिथ्याभिमान और भ्रान्तानुसृत-विचारों की अन्यथा को हटाने वाले मत्समागम, तत्त्व-स्वाध्याय एवं सुख-शुश्रूषा आदि मन्त्रों का विकास करना आवश्यक है

भा० कृ० ६

सदा याद रखो ! ! ! (७)

० कि—धर्म की आगमना के समय चित की अस्वस्थता या चंचलता इस बात का प्रमाणित करती है कि—विचार-शुद्धि एवं विवेक-शुद्धि की क्षमता के कारण धर्म क्रिया का वास्तविक महत्व स्पष्ट रूपसे समझा नहीं है

० कि महत्ता के अनुसृत जिवन पर चढ़े हुए को भी अंततः एक पलटकार में अवनति और विनाश का गहरी एवं अंधकार

न्हायो घोयो क्या भयो! मनका मैल न आय ।

मीन मदा जलमें रहे, घोवे मष न आय ॥

पूर्ण राट में ढकेले देनेवाले मिथ्याभिमान, त्रिकाग की गुलामी और स्वच्छन्द-वृत्ति से सावचेन रहो ।।।

० क्रि—किसी भी बात में अधिक मनभेद होने से उसी बात की मौलिकता को क्षति नहीं पहुचती है, शक्ति ता मईश्रुता, विचारकता, विशाल बुद्धि एवं चित्तमा-वृत्ति आदि के न होने से क्षुद्रबुद्धिवाले लेभग्गु अवूर विचारका स अत्यधिक होता है

—आ० क० ७

सदा याद रखो!!! (८)

० क्रि—दूसरा का बुरा करनेका या होनेका ग्याल ही अपन-भाप की विचार-शक्ति को ग्रम कर देता है, क्योंकि—बुद्ध के जले बिना त्रियासल्लइ कभा भी दूसरा को जग सकता नहीं है

■ क्रि—जीवन का समार्ग पर टिकाये रखने क दा आधार स्तम्भ है, किसी के माधुगेर-वत्ताव करना नहीं और किसी के प्रति बिना किसी विवेक के अत्यधिक आदर-भाव बताना नहीं

० क्रि—जिसमें सारासार क विवेक को हैमियत, अपना समझ और शक्तिका नपा-तुला यथार्थ मान एवं अथोचित देश-राज की पहचान है, वह सचा विचारक है

—आ० क० ८

प्रभु सुमरण कोढी भला, गली गली पदती चाम ।

फचन देह जलाय दे, जो न मजे प्रभु नाम ॥

सदा याद रखो!!! (९)

० कि—प्रत्येक व्यापहारिक अष्टो या चुग घटना को रिक्क-
टि के द्वारा उमका भूमिका के यथार्थ ज्ञान के साथ पहचानो। और
विरक्षण जीवन के मौलिक मर्जन या विनाश में उमका कितना हिस्सा
है। यह समझने के बाद ही अपना मत-अभिप्राय प्रकट करना उचित
है। अथवा सुष्ठु-विचारों के प्रवाह में पँस कर दिखने में त्वरान-स
अन्य घटनाओं से जीवन को उन्नति का राह पर लाने वाली प्रेरणाओं
से वंचित रहना पड़ेगा।

० कि—जिसके दिल में अनादिकालीन कुनस्कारों के फल स
जीवन को मुक्त कराने की उदयपटाहट लगी है, वह सचा भाग्यशाली है।

० कि—भगीवतों को समझने में जितनी देर नहीं लगती
है, उससे दूनी महेत उनको मानकर दिल में उतारने में लगती है।
और माना हुई भगीवतों को जीवन में उतार देने के लिए तो अथ
रिक्क थम करना पड़ता है, इसी लिए ईने-गिने मानव ही
मद्विचार और सदाचार के गंगा-सागर संगम को पा कर
जीवन धन्य बना पाते हैं।

अतः भले ही थोड़ा समझो! पर, समझी हुई अच्छी बातों का
दिल में ठीक से जमा कर जीवन में उतारने वाले सतत प्रयत्न करना
बारी है।

— आ० कु० ९

जितने ठारे गगनमें उठने बैरी होय ।

पूरु पुण्य जो तपे, बाल न बाका होय ॥

सदा याद रखो!!! (१०)

० . कि—ज्ञान की परिपक्व अवस्था से उठनेवाले त्याग-वैराग्य के शुभ अवसरों के चउ पर इन्द्रियों के विकार एवं मानसिक कुचिारों को रोकने की चेष्टा करना जीवन-शुद्धि का राजमार्ग है

■ कि—सकर्मों के करने का जोड़ उन्हें गुप्त रखना ही जीवन के ठीक हितकर है, क्योंकि पैड़ के मूल जितना धरती में छिप रहेंगे उतना ही पेड़ हरा-भरा रहगा, सकर्म रूप पुरुष का भी यह ही हाल है

० कि—हर आत्मा का अपनी ही बात रुचिकर होता है, हर तरह से उसे ही समर्पित करते रहना वह अपना आवश्यक कर्तव्य समझता है अतः हर आत्मा को दृष्टिकोण को समझ कर उसकी बातों को समझने की चेष्टा करना उचित है —आ० कु० १०

सदा याद रखो!!! (११)

■ कि—हर काम करने से पहले दिव को टटोलो कि—मनुष्य में क्या यह यह काम मेरी आवश्यकताओं का पूरक है कि बाधनाओं का

■ वासनाओं का तृप्ति पा के द्वारा आग को बुझाने की उपाय सर्वथा अशुभ है अतः वासना-पूर्ति के भ्येय से कोई भी काम मत करो!!!

पाप छिपाया ना छीप, छीपे न मोटा भाग ।
दायी-दुबा ना रहे, रुई लपेटती आग ॥

० कि—आत्मिक सद्भिचारों के बल पर अपनी आवश्यकताओं का पूरवसरण किया करो।

बुद्धि—आवश्यकताएँ भी दो तरह की होती हैं स्वाभाविक (जिसको पूर्ति के बिना जगमगिका दिखाव हो नहीं हो सकता। और—पैदा की हुई (जिन्हें कि अज्ञातवा यासनाओं से उत्पन्न पर भी पहचाना नहीं जाती है) इन दो में से स्वाभाविक आवश्यकताओं की पूर्ति के नाम्ने ही समय-विवर के साथ प्रवृत्ति करना उचित है

■ कि—दूसरों के गुण एवं अपने दोष पहचान लेने की गमना ही आत्म-व्यापण साधना की पूर्व-भूमिका है

—आ० कु० ११

सदा याद रखें ! ! ! (१२)

० कि—अननिका आश्रय ही स्ववन्निका राज मार्ग है

■ कि—आशातीत लाभ मित्रों पर भा-भुष्ट न होना जीवन को भुङ्गतम कष्टों का परिचायक है

० कि—किसी भी कार्य में अमरफण्टा मित्रों पर उनमें से पराजय के बीजों रोज़ कर अमर भागा और अदम्य दासाह के बल पर पुनरुत्थान का स्वर्ण अवसर प्राप्त करना उचित है

० कि—विवेकी वह कि जो सम्वाद के साधनों के रहत भी मदमस्त न बने

—आ० कु० १२

बड़ा भया तो क्या भया !, जैसे पैदल राजूर।

पंथी बुछाया नहीं, फल पागे अति दूर॥

सदा याद रखो !!!

० विचार और विकार के झमेले में फँसे हुए अज्ञानी प्राणीयाँ को अंतरात्मा की पुकार की सूझ न होते हुए भी वासनाओं की विवशता कई बार अंतरात्मा की आवाज की आड़में भयंकर पापाचारण में फँसा देती है

० कि—विषया का गुलाम। यथेष्ट रूपसे त्वीकारनेवाले अज्ञानी को सम्मार्ग पर सदाचार की दृढ़ता के बिना ज्ञानी गुरु की आज्ञा में रहना बधनकारक प्रतीत होता है यह ही शुद्ध जीवन की उन्नति का द्वार अपने हाथों से खोल कर देना है

० कि—“मैं और मरा” इन दो शब्दों के माहजाल में वास्तविक रूपसे आचार—धर्म की महत्ता न समझ कर केवल शब्द पाड़िय के बल पर ज्ञाना कहलानवाले भा फँस जाते हैं, तो फिर ज्ञानियों को नडा समझनवाले अज्ञान—मूढ़ प्राणीओं का कहना ही क्या ?

—आ० कु० १३

मात प्रकार की शुद्धि

प्रत्येक काम पद्धति से किया जाय तो वास्तविक सफलता के राई पर जीवन को ल जाया सकता है

अतः विवेकी धर्मागधक प्राणी को चाहिए कि—आत्मा को जीवन—शुद्धि के पथ पर आगे बढ़ाने वाले अत्युपयोगी श्री बीनराग

काच कटोरा नयन—पुन, मोती और पुन ।

इतना दुटा न मधे, लामखो करो जतन ॥

एक भगवत का सेवा-पूजा या उपासना भी बड़ी ममत्कार। और जागरूकता के साथ करना जरूरी है

इस लिए शीर्षा में रात्रराग भगवत का पूजा का शुभ प्रैश्य आन्तरिक गग-द्वेष आदि का मन्त्रिना हटाने का बताया है

अन द्रव्य से और भार में शुद्धि स्वच्छता का ग्याल रखना गहरी क लिए आवश्यक है

आन्तरिक भाव-शुद्धि के व्यव को सामने रखते हुए यथाशक्य प्रयत्न से बाह्य-शुद्धि का मा उपयोग विषकी को रखना जरूरी है। रूप-शुद्धि से मनस्व मात्र शरीर की स्वच्छता से नहीं है, पर नीचे लिखी सात प्रकार की शुद्धि से है

अग वसन मन भूमिका, पूजोपकरण सार ।

न्यायद्रव्य विधिशुद्धता, शुद्धि सात प्रकार ॥

अगशुद्धि—छने हुए, परिमिन जल से छेदे-बड़े जीवा की विगवना होन न पाव उस तरह शरीर की बाह्य अशुद्धि दूर करना

(साधन से नहाना यह शरीर-शुद्धि के नाम पर भयकर जीर-हिंसा का प्रतीक है)

वस्त्र शुद्धि—पूजा के उपयोगी वस्त्र (पुरुषों के दो-धोती, न्त्रासत्त-ब्रेस)=दुपटा-मुसकोन वास्ते रुमाल शास्त्रीय नहीं हैं,

परण की चोरी करे, सूई का देवे दान ।

उपर चढ़के देवता, कब आवे विमान ? ॥

और स्त्रीयों के तीन—काचड़ो, माथग और नाडी) माफ़ मुयों और चमक-भमकगळे न हा कर अपनी कक्षा के अनुरूप होना

घन शुद्धिः—पूजा करने के समय चाह किनन भा उपराग द्वेप विषय-कथायों की तम्र-तम भाजनाओं के फटे से वृत्तियों का पुहा कर वातगग के गुणगान में एकाग्र हो रहना

भूमिका शुद्धिः—जिस स्थान पर पूजा आदि करे वह स्थान, आमपाम का वातावरण, विषय-कथाया को उन्नेजित करन बाग न हो नाग अशुद्धि—गुंघ दूर करन के साथ वास्तविक रूपमें राग-द्वेप की दुगंध दूर करना जरूरी है.

पूजोपकरण शुद्धिः—पूजा के साधन कटोरी, कलश आदि चांच माफ़-मुयरा, स्वच्छ, टूट-फूट न हो, देवत्व हो मन प्रसन्न हो ऐसे सुंदर रहना

द्रव्य शुद्धिः—पूजा में काम आनेवाला कशर, चदन, पून आदि चीजें बिना किसी के साथ विश्वासवान आदि किये प्रामाणिकता से खुद के पैसे की छद्म गद्द हो

विधिशुद्धताः—पूजा का शास्त्रीय विधिको यथाशक्य उपयोग करते हुए यथाक्रम से पूजा करना तथा स्वच्छता से मग्नी मुजत्र भागे-पीछे मन-चाहे ढंग से पूजा न करन का ख्याल रहना

—आ० कु० १४

धाली-बुछी जीभड़ी, बोले आल-पपाल ।

बोलीने अलमी रहे, जूता राय कपाल ॥

• मदा याद रखो!!! (१४)

• कि -स्वास् के पन्थों की ममता और आत्मिक विचारों की उबेड़-बुन में कैसे हुए ममारी जीवों को खुद की शक्तियों के विकास और सदुपयोग के द्वारा कल्याण का सीधा-सधा मार्ग बताने का उद्देश्य उपासी जानीयां क यचना के प्रति सदा अक्षर-भाष समता चाहिए

• कि -किसी के दोषों को सुनो मत !

दिसी की चुराईयों को रोको मत ! !

कोई दुग राम कर के होशियारी का प्रदर्शन मत करो !!!

• कि महापुरुषा का जीवन ही ज्ञाना में निर्दिष्ट सम्मार्ग का नमूना है उस नमून माफिक अपने जीवन को बनाना ही महापुरुष के प्रति सदा के अटल प्रतिज्ञा का सचा प्रतीक है —आ० कृ० ०))

विवेक-बुद्धि

“ विवेकी नरः पदितः ”

-स्वास् का प्रत्येक पदार्थ उसे उपयोग में लानेवाले को बुद्धि एवं प्रवृत्ति के आधार पर अच्छा या बुरा हो जाता है

इसी लिए ज्ञानी विवेकी मन्त्रों की दृष्टि में कोई चीज एकमत से बुरी या अच्छी नहीं होती है

काम क्रोध मद लोभह्री, जय लग घटमें माण ।

तब लग पडित-भूरा ही, दोनों एक समान्,

क्याकि—ज्या २ ज्ञान की परिणति जीवन में बढ़ती जाती है
 त्या २ मसार के मन्ने—बुरे पदार्थों के प्रति समभाव-माध्यस्थ
 अपन—आप होने लगता है

अत एव त्रिवेक—बुद्धि को जागृत रख कर समतदारी के
 साथ कोई भी काम किया जाता है, तो कभी भी कोई भौतिक पदार्थ
 की अष्टाद—युगल की मीमासा—समालोचना करने का मौका नहीं
 आता है

यह बात श्रमण भगवान् चरम-तीर्थंकर श्री महावीरदेव
 परमात्माने अपने अंतिम निवाण—समय के उपदेश रूप श्री उत्त-
 राख्ययन सूत्र में “अप्पा मे णदण वण, अप्पा मे सामली
 कूडो” आदि गाथा में—

“अपना मोह—मूढ़ प्रवृत्ति और वृत्तियों के नचाये नाच—नग्वरा
 से उपाजित दुष्कर्मों के फल—रूप विविध ताप—थातनाण आदि
 भोगन के रूपम गुण की आमा गुण के वास्ते कटकमय झालमली
 (मैयड का पेड़) धृन्व का ज्वाला जाता है,

और त्रिवेक पर्व नानीया के वचना का अर्थात्ता के साथ शुभ
 वृत्तियों का सदुपयोग करते हुए हर काम करते रहने से अपनी आत्मा
 नष्टन बन गी ज्वा आनाति—निर्भीमूणा के गुणानुदानसुगधी फूलों से
 गहगा उठता है ।

काका किसका घन हरे!, कोयल किसको देत ।

मीठ रचन बोलके, अग अपना कर छेत ॥

अन हर मृत्ति के स य विचार, मन्त्र, उर्मि, भावना, अव्यवसाय एवं परिणामों को विवेक और नानीया क वचनरूप गल्पों से छान कर पूरी समझदारी के साथ आगे कदम बढ़ाना उचित है

—आ० सु० ?

धर्मक्रिया कैसी हो?

जीवन को सुदृढ़ बनाने यास्ते करणीय धर्मक्रियाओं को करत समय विचार एवं परिणति की निर्मलता बनाने के लिए नीचे लिखे चार दोषों का त्याग कर आशय—शुद्धि पूर्वक धर्मक्रिया करना उचित है

“दग्ध शून्य ने अविधि-दोष उत्तिपरिणति जेह ।

चार दोष छोड़ो भजो, धर्मक्रिया गुण-मेह ॥”

दग्धदोष=तबे पर डाली हुई राखी या अगारे में पड़ी हुई बाटी मशाल कर बारबार नहीं फगन से जैसे नल जाता है, वैसा जो क्रिया की जाय उस क्रिया में बारबार उपयोग का जागृति रख कर विधि पूर्वक करने का त्याग न रखन से वह क्रिया जला टुट रोटी-भाटी का क्या करावे २ फलशून्य हो जाती है

शून्यदोष=बाल क्रिया में उपयोग की जागृति या सावधानता रखना, मन इधर-उधर दौडता रह, फिर भी उसे पात्र में रखन का प्रयत्न न करते हुए भेडिया-धसान=गाड़गा-प्रवाह का क्या मदता—पूर्वक धर्मक्रिया करना

क्रोध चढ़ेया मदन, लागे नहीं उपदेश ।

तेल तबे जल छोटता, मलगी उठे अशेष ॥

अविधिदोष=धर्मक्रिया करने की ठीकी या यथार्थ प्रक्रिया को जाननहीं भी कोजोश न करना, या जानते हुए भी प्रमाद या व्यापरावाही से क्रिया करने समय विधि की जानकारी का उपयोग न रखना, सही तरीके से विधि पूर्वक धर्मक्रिया करने के लिए विचार शुद्धि भी न रखना आदि

अतिपरिणति दोष—शास्त्रकार—महर्षियों के बताये तरीके से निरपेक्ष बन कर सामान्य गति से जिना मोचे-समस्त शास्त्रों के धारणा को ध्यान-रूप से स्मरण दिग्वाध में बड़ी मुंदर आडमर-पूर्ण, परन्तु चान्तरव में भौतिक सिद्धांतों से दूर—ऐसा क्रियाएँ करना

यह दोष अपनी दृढ़ अकाल का घमड़ करने वाले ज्ञानी और अज्ञानी के बीच त्रिगुण जैसा फाल्गुन में रहनेवाले के जीवन में बहुधा पाया जाता है

उपरोक्त चारों दोषों का योग कर शुभ धर्म—क्रिया का पालन करने वास्तव प्रयत्न जीव होना जरूरी है

—भा० सु० २

क्या हो तो क्या करना? (१)

जैसे—जन्मांतर के बड़े अन्धे—यूरे—स्तंभों के बल पर सरह—सरह की दुर्वृत्तिय उठता है, फलतः आभंगति का यथोचित नियंत्रण न होने पर नानाविध दुष्परिणाम बिना इच्छा के भी अनुभूत होते हैं,

गाली महन करीए सदा, गाले गुमडा न थाय ।

जे गमार—जन गाल दे, तेनु मुर गघाय ॥

अतः ज्ञान-विवेक और मनिष्य क प्र पर उन वस्तुओं को
वहन-विक्रम के कार्य में उपयोगी हो उस प्रकार का मोड़ द देन
में भाग्यहीन सफ़रता पाट जाता है इस गि नाच उताये पुत्र
बोल्या का मनुष्योपयोग मारना आवश्यक है

० यदि रानेका मन हो जाय तो—हिमा का उर्तान पर दया
भाव में रात हुए अपने किये दुष्कर्मों पर रोना उचित है

० यदि देरने का मन हो जाय तो—हिमा क टिड या मोपा का
देवन क बनाय अपने दोषों का निरीक्षण करते रहना चाहिए

■ यदि तोड़ने का मन हो जाय तो—हिमा का अच्छा काम
या रूढ़ परोपकारी कार्य का एवं हिमा क ग्ल को न लाइन हुए
अनेक जघनों से लटे हुए कर्मों के पथन को तोड़ने का
समयन करना चाहिए

० यदि बिगाड़ने का मन हो जाय तो—जीवन को नष्ट—भ्रष्ट
कर्मगत मासिक पदार्थों की बुनिषाद पर उठनगले राग-द्वेष से
द्रिष्ट हो पर किसी का नुकसान न करते हुए कर्मों की चित्र-
विचित्र रचना को बिगाड़ने—मिटिया मेट करने वास्तु कपर
कमना योग्य है.

० यदि उल-प्रपच-विश्वासघात करने का दिल हो जाय
तो—अनक अज्ञान-मूढ़ मोहमग्न मसानी जीवों को अपना कूट-माया

धन-धन भी अहितने ! जेणे ओलगाव्यो लोक ।

ते प्रभुनी पूजा बिना, जनम गमायो कोर ॥

जात्रम फसानेवाले मनजीभाई का ज्ञान-ध्यान, समय-पैराय आदि
 द्राग बढ़ता कर सामाग पर गन जारन निगावेकी अनीनि काममें
 लाना उचित है

—आ० मु० ३

क्या हो तो क्या करना ? (२)

—मार क मगर पदार्थ को भी विवेक और बुद्धिमान की क मरुत
 न्योग म अन्त म पकटाया जा सकता है, और —मार को बुर पदार्थ
 का नकरत म दुड़ा कर विवेक-पूरक हर चीज का उपयोग करने का
 छात्र-वृत्ति दी जा सकता है

अतः व्यावहारिक दुर्बलताओं का आन्तरिक विवेक-बुद्धि क
 प्रभाव म सदुपयोग क मार्ग पर लगान वास्ते नीचे की बातों पर पूरा
 ध्यान लाजिए

■ यदि गुस्सा करने का मन हो जाय तो—भजानमूर्खता
 के कारण सहज हो जानेवाली गन्तीया के निमित्त से दूसरा पर गुस्सा
 न करत हुए मध-बूध नष्ट कर अज्ञान क चक्करम फँसानवाउ करों
 के कारणों पर समझदारी के साथ गुस्सा कीजिए ! नाकि —ज्ञान
 और विवेक की मात्रा की क्षति के कारण बारबार गन्तीएँ दुहरा
 त जायें

■ घमड़-अभिमान कर्न का मन हो जाय तो—आत्मस्वरूप
 से सप्रथा भिन्न, जड़, पीढ़गालिक, मात्र पदार्थों की पुण्याधीन प्राप्ति

घणा वेगवाली जुओ काळ-घटी ।

बहु विश्व तेमा पड्यु जेम घटी ॥

में व्यर्थ न पूजते हुए खुद के—ज्ञानादि—गुणों की अगणित शक्तियों का यथार्थ स्वत्वामिमान पैदा कीजिए!!!

लोम-इन्डाओं की प्रचलता हो जाय तो—निन म्भार के पदार्थों को पाने—भोगने या टिफान घाम्ने बड़े से बड़े उपपत्ति गणा गृहाराजा भी अपने भरसक प्रयत्न से मर्जों माफिक यथार्थ रूपम सफल न हो पाये, उन जगत के खुम्भर्वा—गुम्भ पदार्थों को पान की सतपट में जीवन को पिजूर में दु ग्गी न बनाते हुए यथायोग्य जीवन-विक्रम के पथ पर बढ़ानेवाले गुणगान—अतर्निरीचण—शुम्भ—स्वा याप इन्द्रियनिग्रह आदि आन्तरिक गुणों के उदार्जन में रक्षाओं को जोड़ दो.

—आ० सु० ४

क्या हो तो क्या करना? (३)

जीवन की मूल-शक्ति, यदि निवेक पूर्ण रूपमें ली जायें तो भाग, पानी, हवा आदि की तरह अयुपयोगी हो जाती है, पर यदि समझदारी न हो और कुम्भस्वासे के बहाव में नष्ट कर यथोचित रूप से शक्तियों का उपयोग करता न जाना तो वे ही जीवन-शक्ति जीवन को स्वप्ने में डाल देती है,

अन ज्ञानीयों के वचना को ठीक रूप से समझ कर तत्तम रूपमें रहनवासी शक्तियों का योग्य रूप से सदुपयोग करने का ग्याल समना जीवन है

दली मारगे देह मौना दलीने ।

रमे सीझता रिद्धि-मिद्धि रलीने ॥

० यदि मारनेका मन हो जाय तो—अज्ञानप्रभ अपराध कर के अपनी अज्ञानता के नमूने रूप क्रोध के विकार बनने वाले किसी दूसरे को मारने की दुष्प्रवृत्ति द्वारा प्रवृत्तियाँ को मलिन करने की अपेक्षा अपनी दुर्वृत्तियों को ही कार्य-रूपमें परिणत न होने दे कर मन मारने का सत्प्रयत्न करते रहना चाहिए.

० यदि मनोरजनार्थ नाटक—सीनेमा देखने का मन हो जाय तो—अशुभ राग—द्वेष को बढ़ानेवाले इस शौर के धक्के आतर दृष्टि खोल कर कर्मों की भिड़ना से जगत की रग—भूमि पर नाना विध खेलते हुए अपने आत्मा के २ अन्य आत्माओं के चित्र—विचित्र खेल—तमाशे देखा मीन कर नये कर्मों के बंधन से अपने आप को बचाना जरूरी है

० यदि सुशामद करना मजूर हो तो—व्यावहारिक पदार्थों की पूर्ति वासनाभा के आधोन दुनिया के मानवी से गैर फातूनी ढंग से करने की अपेक्षा आत्मा के सहज ज्ञानादि गुणों के सच्चे स्वामी श्री अखिहर्तों के बताये मार्ग पर चलेवाले सद्गुरुओं की सच्चे दिल से करना जरूरी है—ताकि—आत्म उन्मार्ग से बचे एवं कर्तव्य का भाग सदाफल जागृत बना रहे

—आ० सु० ५

थयु द्रव्य भेगु गयु वार वाटे ।

दळे आंधली ने उलो ध्यान चाटे ॥

नवपदाराधना का महत्त्व

जैन शासन में धर्म की आराधना अत्मा को कर्मों के बंधन से मुक्त जगत् में उपयोग' सबर-निर्जरा के उल को बढ़ानेवाली है

परंतु धर्माराधना के अनेक प्रकारों में से श्री नवपदजी की आराधना जीवन को सवाग शुद्ध और मौलिक रूप से आभिक गुणों की शक्ति प्राप्ति करनेवाली है

वस्तुतः - इस में आत्मा को प्रकाश के पथ पर आगे बढ़ाने में उपयोगी देव-गुरु और धर्म रूप तीनों ही तत्त्व मुख्य रूप से उपस्थित बनाये गये हैं

तपस्या के अनेक प्रकारों में भी श्री नवपदजी की ओली का वा मवा-दृष्ट है इस की आराधना करनेवाले समनिग्रह और धर्म-प्राप्त की अभिवृद्धि मरुता से का पाते हैं इस तप के महान् आगवक महाराजा श्रीपाल एर श्रीमती ययणासुदरी जी का आदर्श जीवन इन तिनो में इमा उद्देश्य से सुनाया जाना है फलत आराधक आत्मा को आराधना के वास्ते जरूरी विचार शुद्धि और आचार-पवित्रता का बल अनायास मिल जाता है

हर साल नवपदजी जोग के दिन आते हैं और जाते हैं पर जीवन में इन के द्वारा विचारों का निग्रह, आभिक गुणों की अभिवृद्धि

जीवन-जोगन राजमद, अविचल रह न, कोय ।

जो दिन जाय सत्संग में, जीवन का फलें

एव रोग-द्वेष की 'यूनता कितनी हुई' यह हृदय सोचने रह कर
विवेक पूर्वक श्री नरपदजी की आराधना करनी चाहिए

—आ० सु० ६

श्री अरिहंतपदमहिमा

अरिहत पद भ्याओ यको, द्रव्य गुण पञ्चापरे ।

भेद-छेद करी आत्मा, अरिहत रूपी थाप रे ॥

आज से चाइ होनगारी श्री नरपदजी की आराधना के
प्रथम दिन की आराधना के महत्व को समझानेवाग यह दुहा
आज की अरिहत पद का आराधना के आदर्श को समझाता है !

द्रव्य गुण और पर्यायसे अरिहंतों का ध्यान करने से
आत्मा भेद-छेद पर के अरिहत-स्वरूप बन जाता है ।

अर्थात्—अरिहत द्रव्य से शुद्धात्मस्वरूप है, गुण से शुद्ध अनंत
ज्ञानादि गुणा से सम्पन्न है, और पर्यायसे प्राणी-मात्र के हित-व्याण
—साधना की त परता रूप श्री तार्यकर पद का अनुभव कर रहे है

और आराधक आत्मा खुद तो हाल द्रव्य से कर्म की अनुदि-
वाला है, गुण से मलिन भायोपशमिकादि अपूर्ण ज्ञानादि गुण
सहित है, और पर्याय से २५ साग दशाका अनुभव कर रहा है ।

माग्य हीन को नहीं मिले, भली वस्तु का जोग ।

द्राक्ष-पाक जब होत है, होन काक-च्यु में रोग ॥

इस तरह परमात्मा और अपने बीच भेद का विचार करते हुए इस भेद की दीवार को खड़ी करनेवाले कर्षों के कारण का छेद करने का ध्येय-आदर्श निश्चित कर के ही जानेशास्त्री धर्म की आराधना के फल स्वरूप आराधक आत्मा गुण ही अरिहत-स्वरूप बन सकता है।

यह है आज की आराधना का रहस्य ।

—आ० सु० ७

श्री सिद्ध पद महिमा

रूपातीत स्वभाव जे, केरल दमग नागी रे ।

ते ध्याता निन आत्मा होय सिद्ध गुणखाणी रे ॥

आज सिद्धपद की आराधना मत भिन्न ही आराधना के बल पर प्राप्त की हुई सच्ची आराधक बुद्धि एवं भेद-भेद करने की शक्ति के पत्र स्वरूप मुक्ति-पत्रको प्राप्त करने का ध्येय से करने का है।

आज के पद का परमार्थ यह है कि—

—सार के लक्षणवाचक तमाम पदार्थ रूप ध्यान वर्ण-गंध-रस-स्पर्श-शब्द है, अथवा—सिद्धों के रूपातीत याने शुद्ध निरञ्जन ज्ञानादि गुणों से भरपूर-स्वरूप का विचार कर के ससार के भौतिक पदार्थों का आर्पण कम करने का ध्येय निश्चित रूप से अपनी विचारणा में सदाकाल बनाये रखना आवश्यक है।

फीकर सन काँ खा रही, फीकर सन का पीर ।

फीकर की फाकी करे, यह ही सच्चा फकीर ॥

इस तरह की शुभ विचारणा और विभेकपूर्ण आराधना के बल पर अपना जीवन कर्मों के बंधन से सर्वथा मुक्त हो सक्ता है, और सिद्ध स्वरूप की प्राप्ति हो कर आज की आराधना का यथार्थ फल शीघ्र सरलतापूर्वक पाया जा सकता है। —आ० सु० ८

श्री आचार्य पद महिमा

ध्याता आचारज भला, महामन्त्र शुभ ध्यानी रे ।

पंच प्रस्थाने आत्मा, अचारज होय प्राणी रे ॥

आज से श्री नवपद की आराधना में अति महत्व का कार्यरत बान होना है

गत दो दिन की आराधना तो मात्र जीवन के उच्चस्तरको पहचानने और पान वास्तव जरूर। सच्चे उपनारा की सेवा का आदर्श कायम करने के लिए था—पर 'आज से तो उस आदर्श को व्यावहारिक रूप देकर अरिद्वंद्वों का आजानुसार जीवन को शुद्ध बनाने वास्ते योग्य प्रयत्नशील मान की आचारभूमिका का विकास करने का है

आचार्य पद का आराधन यान—

“स्वयं शुद्ध जीवन पालना और दूसरों को भी वैसा पालनेकी आदर्श प्रेरणा देना ” यह आदर्श सामने रख कर

बड़ा बड़ाई नय करे, उदा न बोले नील ।

हीरा मुख से ना कहे, लाख हमारा मोल ॥

घातों के जघासर्च छोड़ना और दूसरों की गलतीयें निकालने की दुर्वृत्ति पर विनय पा कर विवेक के साथ गुद की क्षतियों का संशोधन करते रहना है।

आज के दुरेमें सुन्मित्र और उम के अर्थात् भद्र रूप पांच प्रस्थान (मंत्र समूह) के ध्यान के बल पर स्व-पर कल्याण साधना की क्षमता पा कर आचार्य पद के रहस्य को स्तोत्र में बताया है।

—आ० सु० ९

श्री उपाध्याय पद महिमा

तप सज्जाचे गत सदा, द्वादश अगनो ध्याता रे।

उपाध्याय तेहिज आठमा, जग यत्रच जग आठा रे ॥

गत दिा की आराधना द्वारा जीरा शुद्धि के लिए त्रिगामक रूप से आचार की भूमिकाको शुद्ध ब्रह्म के प्रयत्न को सफल बनाने के लिए आज की आराधना अत्यंत उपयोगी है।

चूँकि —आज की आराधना आगवक आमाभा को समाधि योग पर पूर्ण जय पाने के उद्देश्य से तार्यकर भगवता के एकत्रि कायाण - का उपदेश के वास्तविक रहस्य की समझ पर अनारि-काया शुभी हुई दुर्वृत्तिका का जट-भू से दसा दा क छिप करती है।

श्री दुर्जन की प्रीतनी, मया सप्रन को प्राप्त।
चारद्वयु गरमी करे, तप यमन की

अर्थात्—उपायय भगवत श्रुतज्ञान द्वारा मंसारी जावा को वास्तविक मार्गदर्शन शुद्ध के जीवन को उन्नत बनाने का देते हैं, उनके आधार पर जीवन को परम-शुद्ध सनातन सत्य के उच्च ध्येय के नजदीक ले जाने का अनिरत प्रयत्न करते रहने में आज की आराधना की सफलता है

शास्त्रों का ज्ञान गुरुगम के साथ शास्त्रों के प्रति आदर भक्ति भावपूर्वक पाया जाय तो ही जीवन को शुद्ध बना में वह उपयोगी हो सकता है, यह बात भी आगरा का को सना याद रखना चाहिए

आज का दुहा भी सप द्वाव्यायम भग्न बन कर स्वार के प्राणी मात्र के प्रति अपूर्व भावदयापूर्ण वासन्ध बता कर प्रभु धीतराग के निद्वाना को समझाना ही उपायय भगवतों की अतुल्य महिमा बताते हैं

—आ० सु० १०

श्री साधु पद महिमा

अममत्त जे नित रहे, नरि हरये नचि सोचे रे ।
साधु सूधा ते आत्मा, शु सुंढे शु सोचे रे ॥

आज आगधक आमाजा को गन दिन की आराधनाओं की सफ़्त साधना के रूपम व्यवस्थित जाना शुद्धि की प्रक्रिया जमा कर

सत-वचन घरसे सुधा, श्रोता कुम-समान ।
ढका मोहका ढरुना, पडे न घट मे ज्ञान ॥

जगत्के अगुण दृष्टिकोणों से सचमुच लुप्तकाग पानका सप्रयत्न करने का लक्ष्य निर्दिष्ट करा जा रहा है।

यह दिन की आगधना में नियम, गुरु भक्ति, जिज्ञासा—यदि एतद् बड़ा नम्रता के साथ जो कुछ भी वैज्ञानिक तत्त्वज्ञान या चोरी हुई कि अज्ञान विचार धुंध का फेफड़ा ज्ञान पाया हो उन आचरणा एवं व्याख्यात्मकता में ज्ञान के निष्पन्न ज्ञान साधुपन्थी आगधना विवेक बुद्ध के साथ करने की है।

निम्नलिखित—भद्रा वाता की जानकारी से ही ज्ञान न होने हुए हितकर कल्याण—माधवा के प्रगतिमय एवं विज्ञान के पथ पर आगे बढ़ने रहने जाय।

ज्ञानमन—माधव साधुओं की सदासाधुता का निर्गोड आज के दुःख में बताया है कि—

अपनी जीवन साधना के पवित्र उद्देश्य की पूर्ति में तन्मय रहते हुए शुभाशुभ वर्षों के उदय से होनेवाले सुख-दुःख के प्रसंगों में मानसिक नम्रता गुमाये बिना समभाव का अभ्यास करते हुए आध्यात्मिक सतोष की भावना में धृष्टि करते रहना यह ही साधुपट का मुख्य आदर्श है।

इस आदर्श को पूर्ण रूपसे जायज । ज्ञान न सकलवांछे भी आगधक आराधक—भाव का प्रभावना रख कर उस आदर्श को जीना में उतारन का प्रयत्न करते रहे हैं।

—आ० सु० ११

अधिकार को पाप कर, कीया न बलु उपकार ।

तांके ही अधिकारमें, न एगो आदि जेकार

श्री दर्शन पद महिमा

श्रम-संवेगादिक शुभा, क्षय वर्षश्रम जे आवे रे ।
दर्शन तेहिज आत्मा, शु होय नाम धराये रे ॥

श्री नरपद की आराधना करनवाउ भक्त्यामाओं की आज अत्यंत महत्व की आराधना करने की है, जीना-शुद्धि का प्रधान आदर्श सम्पन्न करने का मुख्य न्येय आज की आराधना में स्पष्ट रूपसे जीवन में प्रतिबिम्बित करने का है

हर पदार्थ को उसके असंगी स्वरूप में समझ कर उसकी माग-मारता के यथार्थ निर्णयपूर्ण विचार-शीलता और विवर-शुद्धि का यथार्थ समन्वय कर के वास्तविक ढंग से जीना-शक्तियाँ का सदुपयोग करते रहना, यह है आज की आराधना का परमार्थ ।

विचार-शुद्धि और दृष्टि की निर्मलता ही सफलता के आधार-स्तम्भ है, अतः धर्म की आराधना द्वारा जीवन-शुद्धि का कार्य सम्पन्न करने वाले दर्शन पद की आराधना कर के जीवन में सचे-झूठे विचारों की उधेदधुन में अच्छी विचाररुता के फल को रोक कर जीवन-शक्ति को पेनपने देने में सम्यक् प्रकार से दृष्टि की निर्मलता का सहयोग ही अत्यंत आवश्यक है.

श्रम-पथ सब जगत के, मान बतावत दोय ।
सुख देने सुख होते है, दुःख देने दुःख होय ॥

समस्त के मोहक पदार्थों की मायाज्ञान को हटा देना दर्शन पद का धर्म है, तब से उची इबाद भी पढ़नी पड़ेगी। सत्य नहीं होती है, उन्ही तरह चामनाओं की प्रकृति को तोड़ बिना धर्म की आराधना दुःसाध्य है।

अतः कर्मवृत्ति के धर्मों को पण्डित कर्मराज आश्रय का धर्म बढायेवाली पौराणिक ममता पर निग्रह पाता दर्शन पद की गणना का परार्थ प्रत्येक निरर्था आराधक प्राणी का समानता भाव है।

आज के दुह में भी मध्यमदर्शन का पश्चिम सारु या आर्य के साथ आराधना पर ही केन्द्र आपाति न बनाने हुए वास्तविक रूप से मोहनीय धर्म के सयोपशमने होनेवाले क्षम-मयेग आदि अभ्यन्तर दुर्गों के विकास पर अवलम्बित बसा कर आन्तरिक विकास के लिये प्रयत्नशील बने रहने का महत्त्व बताया है।

—आ० ६० १२

ज्ञान पद परिभा

ज्ञानावरणीय जे कर्म है, क्षय उपशम तब धाय रे।

तो हुए एहिन आत्मा, ज्ञान अयोचना जाय रे ॥

विदेही आराधना को अपनी आराधना के परमार्थ की समझावाले अनिमहत्त्व के ज्ञान के रहस्य को समानता आवश्यक है।

सोयु गो जो साधे ज्ञाया, कीडी एक न रहने माया।

छेवे एक न देवे होय सो य नाम साधु का होय ॥

समाज के हर प्राणीकी अपेक्षा मानव को जो महत्व दिया गया है वह मात्र ज्ञानकी विशेषता को ले कर ही, परन्तु ज्ञान वह ही जीवन को लाभप्रद व उपयोगी माना गया है, जो कि सुद की प्रवृत्तियों की छानबीन करने की शक्ति देवे और सिधेरु से पवित्र कर्तव्यों का परिपालन हो सके, ■ यथा बुद्धिछल, वाञ्छल और प्रवृत्ति छल के अटपट चक्कर में जीवन फँस जाता है, और साधना की समान प्रवृत्ति जीवन के रहस्य का बहुत पचिदा और दुष्प्राप्य बना देती है।

अतः ज्ञान को एक महान् प्रकाश या तेज पुत्र के रूपमें समझ कर उसके आगे के अज्ञान, मोह, मिथ्यात्व, एवं राग-द्वेष के कल्पित रुमा का गहन अधकार टिक नहीं पाता है,

इस चीन का ठीक दूरी से समझ कर आज ज्ञान-पद की आराधना कर के पुस्तकों का अक्षरज्ञान या वाक्चातुरी एवं शब्दपंडिताई में जीवन का श्रेय न समझते हुए हर पदार्थ के मार्मिक स्वरूप की पहचान के साथ कर्म य-निर्णायक बुद्धि से प्रकाशित यथार्थ अनुभव ज्ञान प्राप्त करने की प्रेरित करनी चाहिए।

ज्ञान शब्द से पदार्थ की मात्र जानकारी या लेनेका अर्थ समझने का नहीं है, पर उस के असली स्वरूप का परिचय पा कर उस से अपने जीवन में होनेवाले

साकर तजे न सरमठा, सोनळ तजे न क्षेर।

सज्जन तजे न सज्जनता, दुर्जन तजे न बेर॥

लाम-हानि का हिमाचल लगा कर योग्य प्रवृत्ति-शीला में सहायक होना ही यथार्थ ज्ञान है।

अतः एव आज के लुप्त ज्ञानावगमि यम के यथार्थ श्रमोपराम क बाधा पर अनादि-काल की अचोपना-अज्ञानता दूर हो कर सचे ज्ञान का महिमा बनाया है।

श्री चारित्र्य पद पहिमा

श्री नवपद की आराधना का मुख्य ध्येय आज की भाग घना से सम्बन्ध होता है।

अनादिकालीन अशुभ प्रवृत्तियों की वचा में मुमुक्षु आत्मा की निर्रे-बुद्धि मग्न होती जाती है, अतः दबाद गाने हुए रोगीको जितना ध्यान पाहेजी पालन का गमना होता है, वैसी ही सावधानी अपनी आराधना तदस-नहम ग हो जाय, हम का पूरा उपयोग आज चारित्र्य पद की आराधना द्वारा मर-मर का प्रधातावर्ती परिणति क बत पर गमना आवश्यक है।

गन्त विन की आराधना की सफलता का आधार आत विरक्त और मन्वगन्त के पवित्र गम से उठनाही मधी मुमुक्षुता पर यस्याग साधना के फलस्वरूप "ज्ञानम्य फल विरतिः" सूच को जीवन में यथार्थिक दंग से उठारन में है।

परमेश्वर से प्रीत और, दुनियादारीसे फँसना।

कष हू दोनु ना बनें, आटा खाना आर भजना ॥

इस त्रि नरपद के आराधक भज्यामा यथाशक्त्य प्रयत्न से सामासिक मोहमाया के फायों से मुह मोटकर आत्म धन्याण के उद्देश्य से मर-निर्जरा के बडको बढाने तरफ जागृति पैदा करनी चाहिये

अथवा चौमासे के पूर से नदी का पानी बढने पर पथरों की चट्टान जिस तरह अपन उपरसे पानी को पसार होने देने पर भी भीतर से छुपक ही नही रहती है, उस तरह दुनिया को समझाने वाले बाफू-चलुगाद, शब्द-पटिताई और वाणी-विन्यास को कुशलता पा कर केवल छुपक-ज्ञान का सीमा में जीवन वास्तविक अनुभव के आनंद से शून्य बन कर हाथ में दीया ले करके कुँमें गिरने जैसी अशुभ्य गन्ती चार चार होती रहेगी

जत निवक और ज्ञान के परिपाक रूप यथार्थ-मार्ग के प्रति गाने-कदम नडते रहने के त्रि सफल चेष्टा करते रहे

आज के दहे में शुद्ध आत्मलसी विचारों का सतत मनन, मोह-चापनाओं का ह्रास और आत्म-स्वभाव-रमणता को चारित्र का आदर्श बता कर के-सद्गुणों के विकास के लिए प्रत्येक आराधक जात्मा को लाल बत्ती बता कर केवल धैर्य पहनने मात्र से विरतिगारी बन जाने का मिथ्या-सतोष दूर हटाने का सूचन किया है। —आ० सु० १४

जा जगतमा अभिमान तो, फटी न करशो कोय ।

शेर तणे माये किहारा, सनाजेर पण होय ॥

अतः तप का अर्थ शरीर को सूखा देने का या भूखे मारने का न समझते हुए वृत्तियों के प्रवाह को सूखा देना और मन को भूखे मारने के मुख्य अर्थ को जीवन में उतारने की कोशिश करने में आज की आराधना की सफरना है ।

आज के दुहमें आराधना के माण समान आराधक भार की उब-कोटि का निरूपण किया है, आराधक-भाव यानि अनादिकालीन वासनाओं पर निग्रह पाने के प्रयत्न को चालू रखने की सतत तत्पराता, इस के लिए इच्छासयम एव परिणति की निर्मलता मुख्य चीज है, इन्हीं दो गुणों के बल पर विचारों की यथार्थ शुद्धि हो कर अनादि कालीन मोह की वासना के उछाले से आगामी दिन के पापों के विचारों को रोक कर तप पद की आराधना यथार्थ रूप में करने के लिए प्रत्येक निवेकी नरपद के आराधक को सावधान रहना जरूरी है

—आ० गु० १५

श्री नरपद की आराधना का रहस्य

श्री जैन शासनमें सर्व आराधनाओं की अपेक्षा नरपद की आराधना को सर्वोत्तम बताने का मुख्य कारण गुरुगम द्वारा प्रत्येक आराधक को जरूरी है, वह यह है कि —

जेनी गरज पड़े सदा, तेने केम तजाय ॥
वाले छे घर आग पण, घरमा एज रखाय ॥

आत्मा के विशिष्ट-गुणों के विकास में नरपद की आराधना सङ्पूर्ण-रूप से महयोग देनी है, कोई भी गुण इम की आराधना द्वारा विकसित न हो ऐसा हो सकता नहीं है.

इम बीज का समझने हुए प्रायकारेण गेन का रूपक नीचे मुद्रित बताया है

आत्मा यह गुणगत है, जो यथामूर्ति आदि करण-रूप इन्द्रा क द्वारा जेला जाता है, उम म मय्यग-दर्शन रूप उच्च-निर्मल बीज बोया जाता है ध्यान का शुभ प्रकाश उस बीज के विकास में सहायक बनता है, दर्शन रूप राज को सुरक्षित रखन वारते चारित्र की बात उपयोगी होती है, एवं तप-रूप अग्नि से दर्शन रूप बीज का विगाड़नशय अनुम तत्पर ज्ञ कर स्वतन्त्र हो जाता है, बाद म माधु रूपा काष्ठ बादल बरसते हैं, तब उपाध्याय रूपा तरे अनुरपेण हाते है, बाद आचार्य पद क पीन कृ लगत है, फिर अरिस्त रूप श्वेतफल प्रगट होता है और आनरी में पके हुए फल के रूप म सिद्ध पद रूप फल प्राप्त होना है

इम तरह अन्तर्गुणों के विकास के लिए नरपद की आराधना अति गुणग्न उपयोगी है, परंतु ऐसी अपूर्व आराधना सफल न हो हो सकती है, जब कि शांतिओन बताये हुए उन पदों क रहस्या को ध्यान में रख कर हर क्रिया करन का उपयोग रखा जाय

आंटी कांटे अकल बनी, गूँच पड़े न मुद्राय ।

तापीने सोडे नहीं, तो घर-भूष चलाय

हर ओर नरपदवी को ओगे म ऐसे स्मृकार का वृद्धि होना
 १४ और आराधना से मुयामिन जीवा बने, इस के लिए प्रयेक
 निवकी मुमुधु को जागृनि बाये गाना आवश्यक है

—का० क० ?

दान धर्म क्यों ? और कैसे ?

आर्य-संस्कृति मे स्थापित जीवा-चया से परिचित हर कोइ
 मानव दान शब्द से अपना चीज दूसरे का देन का मतलब जानता ही
 होता है, परतु हर चीन क स्वरूप का ज्ञान उस के असली फल की
 प्राप्ति से सफल होता है, यदि यथार्थ-रूप में फल प्राप न हो तो
 निरक का उपयोग कर के मूल-स्वरूप क ज्ञान की प्रामाणिकता
 जाँचना पड़ता है

अतः दानक द्वारा प्राप्त करने लायक आम-आकेया के विकास
 क मानक से मोचने पर जगत क अनकविष मातवो म से हुने-गिने
 कुछ ही भावुक दान की मूल परिभाषा को जान कर यथार्थ
 रूप म विचार-शुद्धि क तत्व का पा सकते हैं

वह परिभाषा यह है कि —

अनादिकालीन पौद्गलिक पदार्थों की समताकां छोड़
 कर पूर्ण निःस्पृह बनने के वास्ते जरूरी परिणाम-शुद्धि का पोषण

अति धन न तापीए, ताप्ये तुटी जाय ।

तदया पठी जो मापीये, उचे भाठ रही जाय ॥

दान के द्राग हो और हर जीव में विविध मिष्टिनाभों में
कसनेवाली पस्त्रिहपत्रा पर निग्रह प्राप्त हो.

बारबार “ हर संसारी चीज को लेउ-लेउ ” जैसी उठन
वाली भावना पर निग्रह कर मगै रोई भा चीज संसार के गुजवान,
या मान-हुस्ती के उपयोग में भाव जैसी मनोवृत्ति बना कर “ देउ
देउ ” की भावना का विकास होना-यह ही दान धर्म का
परमार्थ है.

दान देकर सामाजिक सुखा की प्राप्ति हो, या “ देउगा तो
धर्म होगा पुष्प उदेगा, मये ज म मे नई दिया है तो अभी
मे दुःखी हो गया हू— ” दयालु भावना का लहर किया जावना
स्व. वृत्ति-वापक दान व्यावहारिक दृष्टि में उपयोगी होत हुआ भी
वास्तविकता के विवेक में संसार के मरे या दुःख के मल की
“ या नवन-शुद्धि का मान—” यह दान नहीं हो सकता है

अतः विचारों का शान्तानुसूल बना कर अनादिकालीन
नोद की याचना करने वाले दान देने का विवेक रखना
जसो है.

—का० क० २

श्रीगुरु-ब्रह्मचर्य क्यों और कैसे ?

जगन का कोद धर्म जैसा नहीं जो कि विषय-विकास की
प्रवृत्ति को अधर्म का आचरण न समझता हो ।

टिक्म करे तो टिछ विष, अवला मूझे उपाय ।

कापी बार्दाना कूडियो, मृषक सर्प मुग्न जाय ॥

वास्तविक जीवन-शुद्धि के तत्त्व को न स-झने पर भी स्वभावतः हर मानव में सदाचार के तर्क झुकाव थोड़े बहुत अग्रमें होता ही है, चाहे वह खुद के आचरण द्वारा न हो, तो भी दूसरों से तो वह इसीकी इच्छा रखेगा, कैसा भी व्यक्ति या विषय लपट मानव के दिलमें भी खुद की बहू-बेटियों के प्रति किसी की गलित दृष्टि भी सहसा आवेश पैदा करेगी ही, पशुओं में भी यह बात पाई जाती है।

इतना होत मा—“मंसार क प्राणा सदाचारमय जीवन का आनंद मानते क्या नहीं ? “ क्यों उन्हें दुर्गन्ध से सचमुच भक्त नही होती ” “ जिस छिपे व सदाचार को कायम रखना शालीय-सामाजिक एव धार्मिक नियमों को बंधनरूप समझते हैं । ” आदि विचारणीय प्रश्न सुन माना क दिल में उठ सकते हैं

इस के बारे में विवेकीयता की मुमुक्षुता का सफल बनाने की गरज से कल्याण-साधना के पथ-निर्देश के प्रसंग में निष्कारण-उपकारी जगत्सर्व परम-तारक ज्ञानीयोंने निचोड़ के रूप में फरमाया है कि —

मार्ग-दर्शी देने वाले बुद्धिमानों का खुद का अपूर्णता के कारण सदाचार-ब्रह्मचर्य के पार में मंसार के लोगन अपूर्ण मान्यता समझ रखी है, सदाचार और ब्रह्मचर्य से मतलब मात्र ही भोग

सात घेंतना सर्व जण, किमत अरुल-तुल्य ।

ममता कागल हृदीना, आक प्रमाणे मूल्य ॥

न करना या पशु क्रोडाम प्रवृत्ति न करना ” इतना ही मनुचित अर्थ बहुधा समझा जाना है.

वास्तव में ब्रह्म शब्द से आत्मा के शुद्ध सच्चिदानन्दभय स्वरूप को समझ कर चर्य का अर्थ तदनुकूल योग्य प्रवृत्ति-कर्म, ऐसा विशाल अर्थ समझना और जानना अत्यावश्यक है

इस अर्थ का जानन पर ही “ व्यवहार न ली का परित्याग करने पर भी इन्द्रिया के विषया पर निग्रह या वामनाभा पर समय प्राप्त न होने पर मूढ़ लक्ष्य से अपनी साधना कितनी दूर निकल जाता है ” इस का वास्तविक भान हो जायगा

अमल में किसी प्रकार के विचारों के अधीन हुए बिना आन्तरिक शक्तियों के विकास के कार्य में जुट जाना ही ब्रह्मचर्य का परमायं है. — का० क० ३

तपस्या कैसे की जाय ?

कोई भी धर्म-क्रिया की भाराधना से अगाधिकालान माह के अनुसंधारों पर निग्रह प्राप्त करना, यह ही मुमुक्षु का सफल फलार्थ जीवनराग परमात्मा के नामन में माना गया है

अतः तपस्या करनेवाले भावुक भन्वाभाओं को विकारों के फदे से जीवन को लुडाने के छिन्न वास्तविक रूप से आन्ध्यन्तर तप का

योग्य रीति उपयोगी, दुर्गुण पण बरणाय ।
करीष क्रोध अमत्य पर, तो ते गुण कदेशाय

उद्देश्य में बाध तप के ७ भेदों का क्रमशः यथोक्त ध्यान-आसेवन करने का उपयोग रखना जरूरी है

अभ्यन्तर तप का रहस्य है कि —

आन्तरिक परिणामों में से कषाय और विकारों की मलिनता हटा कर ज्ञानादि गुण पोषक शुद्ध चित्त वृत्ति का फल बढ़ाना

नया बाह्य तप से मतलब है कि —

मलिन मनो-वृत्ति को क्रियास्वरूप स्वरूप देनेवाले विषय और कषायों के बाध-व्यावहारिक स्वरूप को राखने के लिए शरीर-इन्द्रिये और सुषुमालता पर निग्रह पाना

वर्तमान समय में आन्तरिक तप की गिनती का उद्देश्य करीब २ गुना-सा गया है, केवल बाह्य तप की आचरणा और वह भी मात्र भूखे रहना या दुनिया के जग तपस्वी नाम से संबोधन को ल इतना है। सत्य अज्ञात वगैरे कुछ मन्त्रात्माओं का हो गया है

अतः बाह्य तप में भी ऊनोदरी, वृत्ति-क्षेप, रस-त्याग, शरीर की सुषुमालता का त्याग आदि का विगण उपयोग रस कर उपवास, धारिद्र्य, एकाग्रता आदि तप का आसेवन करना चाहिए

बाह्य तप के द्वारा जीवन-शुद्धि के तत्त्व को पाने के लिए आभ्यन्तर तप का आसेवन अवनिरीक्षण, दोषों का पर्या-

नरस-गरस मलीने नभे, नभे न सरसा चैव ।

रहे रागमां देवता, दारुणा न रक्षे ॥

लोचन एवं कर्मनिर्जरा ये अन्वुपयोगी स्वाध्याय-यान के लिए मन्त्र उपयोगशील रहना चाहिए

ऐसे मनोवृत्त दम से तप का आसेवन करनेवाले भक्त्या मा महा-पुरुषा के बताये कर्मनिर्जरा का मन्त्रानाम पा सकते हैं

—का० कु० ४

भावना से मुक्ति का रहस्य

अवधार म देखा जाना है कि—एक ही काम करनेवाले का भावना की विचित्रता के कारण परिस्थिति सम-रिपम हो जाती है

विचार और अंतरंगशक्ति के समन्वय के साथ भावनाओं का जो स्तर जमता है वह हो इष्ट-सिद्धि को देनेवाला होता है

आभीय परिमाण म भी आगच्छ आभासा क मोहनीय कर्म के श्रयोपशम के आधार पर उठनेवाली राग-द्वेष की कमी ही नमाम धर्म की क्रियाओं का निर्जरा का फल देने की ताकत पैदा करती है

शास्त्रों में “भावना के बिना सब लुखा” का लौकिक कला यम को छ कर भाव-धर्म का महिमा गाद है, यह भाव मानसिक विचारा की परिष्ठा से परित्यक्त नहीं है, पर-आभासा क मोहनीय कर्म के श्रयोपशम के आधार पर उठनेवाले प्रशस्त अध्यवसायों को भाव शब्द से माना गया है

जुटा-पोलानु जुओ, धधु जूँठमा जाय ॥

बीछी करदे मादने, साधु जूँठ मनाय ॥

कर्मों के उधमे जैसे राग द्वेष के परिणाम मुख्य हैं ऐसे ही कर्मों की निर्जरा मे राग-द्वेष और विषय-कषायों की हानि मुख्य कारण है

श्री भरत चक्रवर्ती पट्टय ड का भागविलास का अनुमन कर ते हुए भी भावना की शुद्धि क उल स आरीसा भुवनमे केवज्ज्ञान पा सके, वह मान विचारणा रूप भाव नहा, पर जतरग विषयासम्भित और भोगलालसा के निग्रहवाली वास्तविक आत्म-कल्याण की सारना की तत्परता सूचक परिणामों की मुख्यतागळा अतरग परिणामरूप भाव था

शक्ति-साधन-सामग्रा आदि क होत भी मात्र विचारणा कर क भावना-भाजित होन का दावा कर लना वास्तविक मर्यादा शाड भाव-धर्म की अनुज्ञानता-प्रदर्शित करना है

अत आत्मा के पुराने अभ्रम सस्कारों के ह्रास के प्रयत्न के साथ विकार-वासना पर विजय पा लेने के इरादे को सच्चा भाव कहते हैं, और वह ज्ञान, शीठ, और तप धर्म की महिमा बना कर उनम कर्म निर्णय की ताकत पैदा करता है, इस दृष्टि कोण से—

भावे जिनवर पूजीये, भावे दीजे दान ।

भावे भावना भावना भावीए भावे केवलज्ञान ॥

जेतु फारज जे करे, बीजाथी नरि थाय ।

दीपक प्रगटे क्रोड दध, रवि विण रात न जाय ॥

इस दृष्टि के परमार्थ की समझ कर कोटा-पूरी की
माइना न भाव पर' धारा-गतिमय कोसी भावना का अभ्यास कर.

— का० दृ० ५

धर्म के चार भेद क्यों?

बीजराग परमात्मा के शासन में सामान्यतः धर्म के चार भेद
बनाये हैं, दान धर्म, तप धर्म, यज्ञ धर्म और जैन धर्म। पैदा
होने वाले मनुष्य की भावना उस धर्म की नहीं है, पर धर्म के इन चार
भेदों के निरूपण के पण्डित ज्ञानीयों का क्या आशय है? यह भी
विवेकबुद्धि से समझना आवश्यक है।

मंदार के पानाविष दुःखों की परंपरा यासनामा का वृत्ति के
नाम पर उठाया। मोहनोय-धर्म की भिन्न-भिन्न अवस्था के कारण
बीजराग के रुद्र के विचार एवं प्रकृति के वेमल-कर्तव्यों से पैदा
होती है, जिन कर्तव्यों को वृष्ट-मुमिकाको सगा शब्द से गाएँ में
बनाइ है, और उनके चार भेद बताये हैं—आहारमय्या, मयसगा
मथुनसगा, पग्निहमगा.

इन चार मंशाओं पर निग्रह पाने के लिए धर्म के चार
भेद बताये हैं, अर्थात्—

यथार्थ रूप से दानधर्म की आराधना निरुद्धता के
मुख्य ध्येय से करते पर पग्निहमगा का निग्रह होता है।

उपा जेनो जन्मो वसे, ने स्थले ते बलवान्।

जनारमा बल शानु, रानीनु बल रान्॥

वास्तविक दृष्टि से आत्मिक गुणों के यथार्थ विकास के अनुरूप सदाचार को जीवन में उतारने के ध्येय से शील धर्म का आसेवन करने से मैथुन सत्ता पर विजय होना है।

कर्म निर्जरा के ध्येय से आहार लोचता पर नियम करते हुए तप धर्म का आसेवन आहारसत्ता पर कानून प्राप्त करवाता है।

यथार्थ आत्म-शक्ति के विकास से उठनेवाले ज्ञानादि सद्गुणों की वृद्धि और आत्मा के शुद्ध, सच्चिदानन्दमय, निर्विकार स्वरूप के परिचय के साथ कर्म निर्जरा के लक्ष्य को स्मरण कर मात्र धर्म का परिपालन आत्मा को बान-बान में पौदगन्तिक पदार्थों के नुकसान या विनाश के धौले से उठनेवाली भयसत्ता को समूल नष्ट कर देता है।

इस प्रकार, दान, शील, तप और मात्रधर्म की आराधना करके आत्मा को त्रिषम-कर्षों के बधनों में फँगाकर रखने-वाली परिग्रह, मैथुन, आहार और भय-सत्ता पर क्रमशः विजय प्राप्त करना सुज्ञ विवेकी का कर्त्तव्य है।

—का० कु० ६

सदा याद रखो !!!

• विवेक याने सत्य-असत्य, हित-अहित, कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य एवं हेय-उपादेय का यथार्थ निर्णय इस के सदुपयोग से जीवन सद्गुणों की खुशनु से महक उठता है।

दर्जनने गुण दीजिए, करे आप उपकार।

प्रथम हणें देनेरने, मर्कट कर तलवार॥

अतः प्राचीन काठ म जिस प्रकार वणझारे विभिन्न माल-ममान
बैलों पर लाद कर देशांतरों में जाते और उम में खूब पैसा कमाते
थे, उस दृष्टांत का एक रूपक शास्त्रकार भगवन्तोंन भजान-भूद
प्राणीयों की प्रवृत्तियों का यथार्थ निश्लेषण करते हुए बताया है कि —

नरभर नगर सोहामणु वणझारा रे ।
पामीने करजे व्यापार अहो मोरा नायक रे ॥

किसी समृद्ध वणझारे को बैलों पर खूब सामान लाद कर देशांतर
में जाने समय उस का पनी जिस प्रकार भगमण-हित-शिक्षा देती
हो उस प्रकार ज्ञानीयान् इस असार रूप अटवी में गनाविध उपाधियों
सेनस्त जीवात्मा रूप वणझारे को सुमति रूप खी समझाती हुई
कहती है कि — 'ओ मेरे प्राणनाथ ' मनुष्य भव रूप सुंदर नगर-शहर
को पा कर ठुठ जरा सप्रयत्न करना और मैं बताऊ उस दंग से
व्यापार करना

सत्तायन सबरनणी वणझारा रे,
पोठ भरजे उदार अहो मोरा०॥

शुभ परिणाम विचित्रता वणझारा रे,
करीयाणां बहु मूल-अहो मोरा०॥

गुणी-जनमा अवगुण कहे, ते अगुणी ममाण ।
फडयी साकरने कहे, जन ते रोगी जाण ॥

संसार के सुगमवन में रह कर धर्मों को नष्ट कर दान, और उर
में अनेक दुष्टों के धन लपट को हार-जाल-धरि, जो यथास्थिति
होना क मुन मनोवश करि, विगत को बहुत, सब धर्मों माना
मोक्ष नगर भासा भरी बरफारा है,

करजें रिग अनुहर-अज्ञा भोग॥

उस बड़ाव में सब मनुष्य मानते हैं, जो वेद का अर्थ है
मोक्षमयी नगर में जान के लिए नगर होना-तुम्हारे बड़ी दम
का ही मरत बहुत है

निहार मोक्ष नगर क और बड़ा अज्ञान भुवन की मरत सब
देवदेव का ही दाना भुवन का ही दाना है

मोक्ष दारानन्द मोक्षी बरफारा है,

मान रिग-मिगिरा बड़ा भोग॥

मोक्षमय दाने बड़ी बरफारा है,

सारथी पर पात्र भरी भोग॥

हे स्वामिनाथ! मोक्ष नगर में जान के लिए मरत में रहकर
बहुत है, उर सब मनुष्य का दान माना, दम-भोग के उर
के साथ उर पर कर दाना-दमो कया कया दाना है। यह मैं
बताती हूँ —

दुर्जन क नित्य धरि, बड़े न माना मान।

निंद क नित्य धरि, एष अज्ञा गाव जहान

पहले तो क्रोध रूप बड़ा भयंकर—प्रचंड सल्गता हुआ दावानल आप को सामन मिलेगा, पर घबड़ाना मत । ज्ञान के उदात्त जल से उसे जात कर देना।

फिर आगे चलने पर मानरूप बड़ा विकट पर्वत सामन मिलेगा, उसे नम्रता के द्वारा धीरे २ पार करना और हर काममें साध्यानी बनाये रखना।

यशजाल माया तभी षणझारा रे,
तिहा नही करयो विधाम अहो मोरा०
ग्याडी मनोरथ भटतणी षणझारा रे,
ते पूरणनु नहीं काम—अहो मोरा०

फिर आगे माया की गहन बास की झाड़ी मिलेगी, वहाँ मूठ करके भी विधाम नहीं करना, अन्यथा तमाम सध्रमन बरबाद हो जायेंगे।

उस के आगे एक गड्ढे के किनारे मनोरथ नामका प्राक्षण बैठा हुआ मिलेगा और वह दागने में जरा—सा परन्तु मायापूर्ण अपरम्पार उम गड्ढे को भर देने वास्ते बारबार तुम्हे प्रलोभित करेगा, पर । उस की बात तक सुनना नहीं ।

राग—द्वेष दोय चोरटा षणझारा रे,
धाटमा करयो हेगन—अहो मोरा ॥

संभटनीं शरुा करे, तेहवी काह नरि थाय ।
शीखे तरबा शी रीते, जो जलमा नहि जाय ॥

० विद्वानों का जीवन में शास्त्रीय बातों का प्रतिबिम्ब नहीं होता है, तो व्यवहार-मूढ़ लोग जीव-शुद्धि के तत्व की सच्ची पहचान न होने के कारण ज्ञान-ज्ञान की आड़ में गुद की गन्ती का छिपाने की दुष्प्रवृत्ति दम्बादेखा करने लग जाते हैं, इसलिए समझदार-विद्वानों को अपने जीवन की मर्यादा बनाने उपरांत व्यवहार-शुद्धि का भी पूर्ण ग्याल रखना चाहिए।

० साँप काटे हुए व्यक्ति को साँप के जहर के कारण अत्यंत कष्ट भी लगेडा मधुर मादम होना है, उस तरह अज्ञान और मोह के कारण नितान्त दुःख से परिपूर्ण भी जगत के पदार्थ हमारी जीवों को सुखशान्ति के श्रेष्ठ साधन मादम पड़ते हैं। सचमुच में तो जगत के पदार्थों के द्वारा अत्यंत अज्ञाति पत्र दुःख ही नसीब होता है।

—का० कृ० ९

सदा याद रखो!!!

० विचार और कर्त्तव्यों की शुद्ध भूमिका परिस्थितियों के यथार्थ विवेक के साथ आन्तरिक विचार-शुद्धि के बल पर हो पाती है। अतः योग्य गुरु-निष्ठा में रह कर ज्ञान और कर्त्तव्यों की भूमिका बनानी चाहिए।

० अपने-आप की क्षतियों को सच्चे स्वरूप में पहचान कर उसे दूर करने का सत्प्रयत्न करे, यह सचा ज्ञानी है।

कैंकर काम अभ्यासना, पण नहिं बुद्धि प्रकाश।
नटरी नाचे दोर पर, अकल नहिं अभ्यास॥

० इन्द्रिया के विकार एवं भागमिक-शुचिचारों को ज्ञान की पवित्र-अवस्था से उठनेवाले त्याग-वैराग्य के शुभ अध्यवसायों के बल पर राखने की चेष्टा करना ज्ञान-शुद्धि का राज-मार्ग है

— का० कु० १०

सदा याद रखो!!! (१४)

० आचार में कमजोर आत्मा जिनका नुरुत्तमान संसार क मूढ़ जीवों के साथ-दर्शन के साथ में नहीं करना है, उससे अधिक अनर्थ शुद्ध के आचारों का कमजोरी तथा कर भागना को इकार न करने की विचारों का कमजोरी करने है

० संयोगवश हो जानेवाली आचारों की विपत्तियों को छिड़ाने का दुष्प्रयत्न न करत हुए सत्य वस्तु का सचे दिल से इकार करते रहना जरूरी है.

० इन्द्रिय और मन की वृत्ति मदा प्रवृत्तिशील होती है, अतः अनुभ-यानावरण से उचते रह कर सदा अपनी वृत्तियों को महा-पुरुषों के समागम, शास्त्र का पाप, आत्मचिंतन आदि शुभ कार्यों में लगानी चाहिए ।

० शुद्धि और समझदारी का उपयोग दूसरों के दोष या छिद्रों की गवेषण में करना अपने हाथों अपने विनाश को आमंत्रण देने वाले दुर्गुणों का पोषण करता है.

विण विवेकनो भानशी, समनो पशु समान ।

बानरने पण छे जुओ, हाथ पण मुख कान ॥

० अपने विक्रम के कार्य में बुद्धि-समझदारी का सदुपयोग सद्गुणों के विग्राम द्वारा करते रहना जरूरी है।

—का० छ० ११

सदा याद रखो ' ' ! (१५)

० बिना विवेक का ज्ञान दिमाग में चाहे कितना भी भरा हो, पर ' हेय-उपादेय का अमली निर्णय कर सकल प्रवृत्ति कराने में मर्याद न होने के कारण समय पर खुद के काम में न आ सकनेवाले निजोरी में भरे हुए धन की व्यर्थ करीब ० निष्फल ही है।

० ३० २ पदार्थों को सोचने-ममजने की शक्ति का विक्रम हो, त्यों ० अज्ञान के फलरूप छोटे कामों को तोड़ कर शुभ कामों में आगे कदम बढ़ते रहने की शक्ति भी विकसित होनी चाहिए, अन्यथा ज्ञान का दुरुपयोग हो कर खुद की गलतीयों को सुधारनेके बदले उसे छिपाने का दुस्साहम करने की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती रहती है।

० विचार और प्रवृत्तियों के बीच विवेक का गणना लगाये बिना हरदम नाग प्रकार का अनुचित प्रवृत्तियों का उद्यान जीवनमें होता रहता है

—का० छ० १२

जोक न करिए प्रथमथी, लाभ थरो के क्षण ? ।

जगमा मूरख जन करे, मुआ प्रथम मोकाण ॥

दीपावली पर्व की महत्ता

घनशयोदशी का रहस्य

ईश्वरगण भगवतों के बताये हुए विद्वानों को समझकर उचित धर्तव्य दिशा का निर्णय करनेवाले विवेकी सज्जनों को भली-भाँति यह बात जानना जरूरी है कि—आज से दीपावली पर्व का त्यौहार जो चाट होता है उसे दैवमे मनाया जाय ।

समाज के पुरखे-प्रेमी अज्ञान-मूढ़ लोगोंने तो जेदिक जीवनके बानासग को लेकर निपयेच्छाए कामनाए एवं मोन-मजाह की मारनाभा की शक्ति करने के दंगस योहारों को मनाने का उचित मान रखा है, परंतु विवेक और समझदाग का थोड़ा भी सदुपयोग करने पर हर किसी को यह प्रतीत हो सकता है कि —

प्रकाश और आनंदकी ल्हरे जीवन में फैलाने वाले इस दीपावली के त्यौहार के प्रभग पर अज्ञान, अविवेक, विचार-हीनता आदि को लेकर दिल बहलानेके नाम पर विविध प्रकारके फटाफूटे और दाह-खाना फाड़ कर हुआग-आखों रुपयाका धूँआ करके दुनिया को अपनी विचार-शून्यता एवं वसमझदागी का नमूना बताने सिनाय और क्या चीज है !

एत विवेकीया को इस त्यौहार के असली स्वरूप को ज्ञानी गुरु और शास्त्रकारों की व्याख्या के बल पर समझ कर चरम-उत्थर मनु महानीय देव परमात्मा समाप्त कर्मोंके बंधन से मुक्त हो कर

नव समजे भावार्थने, करे कादनु काई ।

फानस सलगावो ह्यु, नारयु भदवा माहि ॥

मुक्तिमें पधारे, इस चीज के प्रतीक रूपमें अपने अंतर में भरे हुए अज्ञान के अधकार को हटा कर अपनी अविवेकपूर्ण विषम प्रवृत्तियों का शमन कर योग्य प्रवृत्तियों द्वारा उच्च प्रकाश के पथ पर आगे बढ़ते हुए जीवन की सर्वोच्च विकास की भूमिका पर ले जाना वास्तविकी का त्रेणि प्रकट कर इस त्याग को प्रकाश के पर्व के रूप में मनाना चाहिए।

जिसमें आज धनत्रयोदशी का जिन होनेसे प्रकाश के पर्व की सफलता वास्तविक धन-संपत्ति के मौलिक स्वरूप की गार सम्हाल करना पड़ता है, पर 'यह धन संपत्ति सोना-चांदी के टुकड़े या जड़ भौतिक सामग्री के रूप में न समझते हुए जीवन शुद्धि और सर्वांगीण विकास के लक्ष्यसे आंतरिक गुण-संपत्ति, विचार-शुद्धि और विवेक दृष्टि के महामूल्य गवजाने को सम्हाल कर भूतकालीन धर्मियों का पुनरावर्तन न हो कर भाविमें जीवनशुद्धि के अनुकूल मद्बिचार-विवेक की अमूल्य संपत्ति का जुटार बना रहे।

यह है आज के दिनका रहस्य।

—का० कृ० १३

ज्योतिषयी जो जोशीओ, भविष्य जाणो सोय ।
तो जोशीनी पुत्रीने, रदापो नवि होय ॥

दीपावली पर की महत्ता काली चौदश-रूपचौदश का रहस्य

नैन शासन के पर्य या त्याहारों का असन्धान विवेक-बुद्धि से न समझने के कारण पर्वों के आयोजन के पीछे रहे हुए जानीयाँ के भाग्य का सफाया लकड़जीवन में नहीं हो पाता है

दीपावली क ठिए भा खगब २ जेसा ह। हुआ है

देखिये ! पर्व शब्द का अर्थ शब्द-फलों में गांठ बनाया है, ईश्वर-जाने (शेठडी) के १२ गांठ में अलग २ रस होता है और उसी गांठ में हा दग (शेठडी) के नरसर्पक बीजोका मत्ता होता है, इस तरह गेन धर्म का आराधना का काम न उठा मकरंसाठा २ धारने जानीयान सापा हेक्, पाश्र्विक, मासिक आदि पर्वों की योजना की है, हमसे इन जिनो में सामागिक कामा से फुसलकर जीवनशुद्धि क उदात्त कार्य में प्रयोगात्मक कार्य कुछ करें-परंतु आजकल आमोद-प्रमोद मौन-आनन्द एवं विन्यासिना क पोषण क कामों ही दीवाला पर्व फरीर मनाया जाना है

अतः दीपावली की यथार्थ आराधना करने वाले नीचे की बात पर ध्यान दीजिए :—

सग अधमनिा करे, धर्मो पण पीदाय ।
जेम धारना सगते, शाह केदमा जय ॥

दीपावली पर्यंत परमात्मा श्री महावीर देव के निर्वाण से संबंधित है।

अतः निर्वाण शब्द का अर्थ समझना जरूरी है—निर्वाण शब्द का अर्थ शब्द शास्त्रों की परिभाषा के आधार पर “सुप्त जाना” होता है, अर्थात् प्रभु महावीर देव का जन्म-मरण रूप भाग या कर्मों का भाग सर्वथा बुझ गई, जिससे कि वे परम-सुखी बन गये इस प्रकार अपने जीवन में भी कर्मों की भाग को भट्काने वाले मिथ्यात्व, अनुभव, वृत्ति, शक्तियों का दुरुपयोग आदि आश्रयों का क्रमशः त्याग करने की शक्ति बढ़ाते रहना, दीवाली पर्यंत की आराधना का संक्षिप्त मर्मस्वरूप अर्थ है।

इसी दृष्टिकोण से आजकी सप्तविंशति का मतलब समझना चाहिए, सप्त याने आत्मा के शुद्ध, निर्विकर, सच्चिदानन्दमय, ज्ञानादि-गुणसमूह सप्त स्वरूप को जानने, समझने, विचारने की योग्य भूमिका तैयार कर आगामी दिन दीवाली पर्यंत की यथार्थ आराधना के लिए तैयार होने के विधि।

अतः एवं आत्म-स्वरूप की विचारणा या सम्यक् ज्ञान के प्रकाश के बिना चाहे कितना भी बुद्धि शक्ति या वाद्य माधनों का प्रसार जीवन बुद्धि के वास्तविक अर्थहीन हो है, इस चीज को काली चौदश नाम से समझना चाहिए।

मले होय भूटा-मला तोये माइ ने माइ ।
दात-दुखावे जीमने, तोये दात सुखदाइ ॥

दीपावली पर्व महिमा

आज का दिन मद्दान पवित्र है

आज स २४८२ वर्ष पण्डित ज्ञानन नाथर श्री महाश्रीर दत्त
भगवत आज की रात्रि के अन्तिम प्रहर की दीपदा वांछी रहने पर सत्कार
के बंधन से मुक्त हो कर अज्ञगम्य पद रूप में पद को पाये थे

आज उसे स्मृति-पथम गुरु रूप में जीव की मिथ भावना के
बल पर ज्ञान-बुद्धि के दर्शन का प्रति साधन हान का विरोधी
भा का कर्तव्य है

दीपावली पर्व महिमा

आज का दिन मद्दान पवित्र है।

आज स २४८२ वर्ष पण्डित ज्ञानन नाथर श्री महाश्रीर दत्त भगवत
आज की रात्रि के अन्तिम प्रहर की दीपदा वांछी रहने पर सत्कार के
बंधन से मुक्त हो कर अज्ञगम्य पद रूप में पद को पाये थे

आज उसे स्मृति पथ में गुरु रूप में जीव की मिथ भावना के
बल पर ज्ञान-बुद्धि के दर्शन का प्रति साधन हान का विरोधी
भा का कर्तव्य है।

श्रीरुद्र-मन्त्रि ज्ञि माह-गग और द्वेप के निविड जपकार को
नष्ट कर अनन्त भयानाभा का मुक्ति के पथ के सफर यात्रि बना
कर सर्व श्रेष्ठ कल्याण की साधना कराने-करानेवाले अनन्त उपकारी

तीर्थे पाप टले नहीं, जो मन मेछ न जाय।

खाल-कुदीनु हांठु, घोये उपर ॥ पाप ? ॥

विश्ववत्सल श्री तीर्थंकर देव परमामा जैसे महापुरुषों का अपनी दुनिया से चल बसना अपना जैसे निजी मान ग्यो कर ममार के मोह-माया के चक्र में फँस रहनेवाले कर्तव्य विमूढ़ आमाओं के लिए तो विवेक के उबाल प्रकाश से देखा जाय तो अत्यंत मानसिक आघात पैदा करनेवाला है

पर साथ ही निष्कारणोपकारी जगद्गुरु अरिहतदेवों का नगर मौक्तिक देह-मर से नाम शेष होते हुए भी उन के अपार करुणा पूर्ण अमर-देह रूप आगमा का परिशालन गुरु निधामें करने पर आश्वासन भी मिलता है कि —

जगद्गुरु तीर्थंकर देव परमामा की मौजुदगी में अपनी आत्मा न जाने मर की किस गतिम होगी। या तीर्थंकरदेव की याणी और उन की कर्तव्य निष्ठा को पहचानन की क्षमता नहीं पाई होगी सभी तो नदी के किनारे रह कर भी प्यासे रहनवाड़े की ज्यों अपना जीरा विश्व को प्रकाशमय बनानेवाड़े तीर्थंकर रूप सूर्य के जमाने में गुजर कर भी धुधु के पक्षी की ज्यों अधिकारमय ही रहा—

अतः अब भी तीर्थंकरदेव-परमामा के शासन को भलाभाति गुरुगम से विवेक के साथ समज कर यथा शक्य आराधना में आगे कदम बढ़ाते हुए कर्म निर्जग के भ्येय को परिपूर्ण करने की कोशिश करना आज के पवित्र दिन का मूक सदेश है।

जुदा जुदा सभासना, जन देखी मत कर खेद ।

सीखा फडवा ने मल्या, तरुवरमा पण भेद ॥

दीपावली का शुभ संदेश अतस्तल में दीप जलाना ! ! !

ओ ! कुरिया के अमर सनेही !

दापमालिका वहीं मनाना ॥

१
धैर्य के इन प्रासादा पर,
नश्वरता के अवसादा पर,
नेपथ्यसी इस चकाचापि में
मपने को तू नूल न जाना
—अतस्तल में ०॥

२
वपग-सी चंचल मायामें,
गनृष्णा की इस लायाम ।
कंतन दोष बुझे जाते हैं,
या तू न उनकी पहचाना ।
—अतस्तलमें ०॥

३
कसके धर्म दीप जलाना ।
गुण दृष्टि हो नया इठगता ।
हैं कुटार नहीं तेरा ह,
इ तो एक मुसाफिरगाना
अतस्तलमें ०॥



दी

पा

व

ली

र

ह

स्य



४
उजड़ नीड़ छिपे मे तारे,
नीपक बुझ जायेंगे मारे ।
निम्मृत होगा नयप्रकाश यह,
तब होगा तुझको पठाना ॥
—अतस्तलमें ०॥

५
इन दीपामें मलम न हो तू ,
स्वयप्रकाश है अजर अमर तू ।
मवेदित हो इस प्रकृतिका,
अर तरु तू ने भेद न जाना ॥
अतस्तलमें ०॥

६
जगती के इम निम्नुल जलमें,
प्रलयकर-सी इस हलचलमें ।
तरमें शाश्वत अमरदाप है,
स्वननिशा से अर जग जाना ॥
—अतस्तलमें ०॥

इसी दृष्टि-बोध से आज का दिन तद्देवार के रूपमें परम हर्ष-
आनन्द का प्रतीक भा माना गया है कि—

जय सारा समार यथार्थ-ज्ञानी वीतराग परमात्मा के
सदुपदर्श में से वननमात्रे अनजानमय वस्तु का पहचान करानेवाली
सद्दृष्टि के अभाव में निम्न कलिकाल के पत्रे में फँसा जा रहा है,
फलतः कल्याण-साधना के सिन्हे हुए मयोगों को व्यर्थ-प्राय बना देते
हैं, तब हमें तो परमहितकर कल्याण का पवित्र मार्ग जैन शासन
की आराधना के रूप में मिला है, उस शक्य प्रयत्नों से सफल बना कर
अनन्त ज्ञानों के उपार्जित ज्ञानों के समूह को हटा कर वास्तविक आत्म
कल्याण की साधना कर उन का परम हर्ष भी आज का पवित्र दिन
पैदा करता है।

इन दोनों बातों का विचार कर अंतरात्मा में कल्याण
साधना का प्रकाश फैला देना मशी दीपावली है।

—का० कृ० ०))

नूतन वर्ष की मंगल कामना

वीर नि म २४८३ ज्ञानीयो का संदेश वि सं २०१३

नूतन वर्ष का मंगल प्रभात आचार्य गोपाल सन किसी
को स्फूर्ति-नव प्रेरणा देता है.

सज्जन सीना स्नेही छे, पण दुष्ट तणे मन काल ।

जगत चतु ठे सूर्य पण, धुनूद गणे विकराल ॥

ज्ञानी भगवतों ने भी शुभ प्रवृत्तियों में जगत्प्राप्ति के माध्यम के रूप में रहने का बल न प्राप्त होने तक लौकिक व्यवहारों का भी वास्तविक रूप में ज्ञान के लिए नूतन वर्ष की मेगाडमयता का यथार्थ रहस्य बताया है—

वह यह है कि—“नूतन वर्ष के भगल प्रभात में सब कोई नये वस्त्र पहन कर, क्रोध, ईर्ष्या आदि स्वभाव की विषमता को दबा कर भी” नूतन वर्ष का प्रथम दिन अच्छा और भगलमय हो पूरा वर्ष अच्छा” ऐसी भाषना को ले कर विविध कामनाएं एवं प्रवृत्तियाँ नये साल के प्रथम दिन को की जाती हैं।

परन्तु इन सब कामनाएं प्रवृत्तियाँ ही सफलता का आधार शिला रूप निरर्थक और समझदायी न हो तो मात्र कामना या ऐसी—वैसी प्रवृत्तियों की भरमार से इष्ट निधि होनी नहीं है।

अतः निवेक बुद्धि के साथ यह मचना जरूरी है कि —

जैसे किताबमाला, भद्र, या बड़े आदमी का अपने घर आमंत्रित करना हो तो उनके मान-समाज के अनुकूल शहर, गली, घर एवं रूप को सुसज्जित बनाकर सुदृढ़ व्यवस्था शरीर को माफ-सुखरा बनाये रखनेकी सावधानी रखना आवश्यक होता है।

गणे नही गभीर जन, दुर्जनना आराज ।

श्वान भसे मो सायटा, गणे नहि गनराज ॥

उसी तरह अनन्तजात्र जिस का दिवसे चाहते हैं, अपने मनो-मंदिरमें बारबार आमंत्रित करते हैं, तथा अनन्तभवा में भी दुर्लभ ऐसी पारमाधिक मुग्ध-शान्ति को नूतन वर्ष के मंगलप्रभान या मंगलभूत प्रथम दिन की कामनाप-प्रवृत्तियों द्वारा जीवन में स्थापित करने-पधरान वास्ते मनोमंदिरमेंसे राग-द्वेष, त्रिषय-क्रोध, ईर्ष्या-असहिष्णुता आदि रूडे-रुचरे को माफ करके क्रोध, मान, माया, लोभ, अहंभाव, पौद्गलिकराग, विषयदृष्टि आदि पुराने-अतिपुराने अनादि कालसे पहने हुए पुगने उत्तर कर मृत्यु, जील, दया, क्षमा, सतोष, गुणानुराग, आदि नये वस्त्रों से सुमज होकर, बीतराग-प्रभु के हितकर वचनों को जीवनमें उतारने की यथाशक्य प्रवृत्तिरूप व्यवस्थित कर्नी-चर लगाकर, मयी सुख-शान्ति को आमंत्रित कर उसके सत्कार का शुभ मकल्प नूतन वर्ष के मंगलभूत प्रथम दिनमें करना जरूरी है

जानीयों के इस मदेश को सोच समझकर नूतन वर्ष को मंगलमय बना देना प्रत्येक विवेकी का कर्तव्य है

—का० सु० १

यहू जन मलीने जे करे, ते एके नवि थाय ।
मारणी घर स्वच्छ करे, सली एके शु थाय ॥

ज्ञान की चार भूमिकाएँ

० संसार के पन्थों को जानना और उन्हें भ्रान्ति की दृष्टि
आनन्दध्यान की प्राथमिक भूमिका है।

० जिन्हीं हुए विषय—महात्मा सामर्थ्य का दिखाये गये वान
बाहू जैसे भी प्रयत्न करने को दृष्टि रीति जानकी प्राथमिक
भूमिका है।

० यत्नगत समानता के पन्थ हुए चान के पन्थ के
स्वपक्षी सही प्रतीति धर्म ज्ञान की प्राथमिक भूमिका है।

० आत्मा का मूर्तमान गाना गान की मूर्तमान विचार
विचारणा मुक्त ज्ञान की प्राथमिक भूमिका है।

—का० सु० २

सदा याद रखो ' ! ' (१७)

० मन्त्र—गर्हित युक्त विचार—यत्न धर्म और विचारों की
कमोता उद्यमी मनुष्य परिणामम सिद्धय दृष्टतापक तुम भी
नहीं जाना है।

० विचारों के आशयम कर्तव्यनिर्णय की भूमिका दिन-भित्त
होकर समझदारी का टोटा पट जाता है, मर सन्तान और महान्
पुरुषों के जीवन का आदर्श का विचारणा का जीवन को मूर्त शक्तिसे
मण्ड बना सन्ती है अतः हस्तम मन्त्रम और शस्त्र स्वायाय
के साथ महा पुरुषों के जीवन को आदर्श तुल्य बनाय रखो।

अशक्त पण शक्ति धरे, धरे नो सपमन्त्रम—
जाय आँखों काशीए, धरी लुब्धने

० इन्सान धन-संपत्ति के नाते से जितना गरीब नहीं होता है, उमसे उईगुना अपनी घृत्तियों को दीनता और कर्तव्यनिष्ठा की गैरहाजरीसे रक-तुल्य बन जाता है, फटत जीवन का रहा-सहा नक्किण भी पुनरुज्जीवित न होकर मृतप्राय बनकर उथान या प्रगति क तमाम द्वार अज्ञानतायन अपने आप बध हा जाता है

—का० सु० ३

मटा याद रखो !!! (१८)

■ प्रिय और विवेक जीवनरथ के दो चक्र हैं, और इन्हें गतिशील करनेवाला सम्यक्ज्ञान गुरुनिष्ठासे व्यवस्थित रूपसे पाया जाय तो निराबाध गतिसे उन्नति के पथपर जीवनरथ बढ़ सकता है.

० सद्दिचारो का सेवन मात्र व्यावहारिक सौजन्य क दीप्तावे के छिप किया जाय तब भी विवेक की भूमिका संपादित करानेवाली आन्तरिक कर्तव्यनिष्ठा और भावनाओं की निर्मलता के मल पर आचार शुद्धिका तत्व दीर्घकालसे भी पाया जा सकता है

० परिस्थिति और वातावरण की प्रतिकूलता में ही ज्ञानी-अज्ञानी की जीवन चर्या आंतरिक तत्वों की यथार्थ पहचान को व्यक्त कर मसार के मामने जीवन का सच्चा आदर्श उपस्थित करती है ।

—का० सु० ४

मत्तवादी साजु कहे, राखे हृदये' रोप ।

नाक बिना नकटा दीसे, दर्पणनो शो दोष ? ॥

ज्ञान पंचमी पर की महत्ता

नूतन बंधे के प्राग्भूत म ज्ञानीयों को मदग जीवनशुद्धि के शुभ मरुत्प का बनाया था, उसे मूर्तरूप देने वास्ते पड़ला ही पर्व ज्ञानपंचमी का अनि त्रिशिष्ट महत्व पूर्ण आज के दिन में बनाया है

आरम्भ की मूलभूत ज्ञानादि शक्तियों को विकसित किये बिना जीवन की शुद्धि शक्य हो नहीं, अतः विचारों की भूमिका में स्पष्ट रूपसे चैतन्य शक्तियों का मान हो जाना सर्व प्रथम आवश्यक है

ऐसे तो प्रत्येक धर्म-मन्त्राय या बुद्धिगाली विचारक वर्ग ज्ञान का महत्व मानते हैं और बताते हैं, पर ज्ञान का वास्तविक स्वरूप ही लोगों के रयाठ म होने से वास्तविक स्वरूप का विवेक नहीं होता है अतः आज ज्ञान की आराधना कर क असर्ग ज्ञान के रहस्य को, समझ कर जीवन को विकसित बनाने का प्रयत्न करना आवश्यक है

ज्ञान का अर्थ होता है जानना, परंतु जानना और समझना इन दोनों के बीच बड़ा अंतर है, पदार्थ को जान लेना बलग चीज है, और उसे समझना अलग चीज है, जानी हुई बातें मौका आन पर जीवन में कई काममें न आकर मात्र औराको उपदेश देना या द्वितशिक्षा देना इतनेमें ही नतोष मनाकर जीवन को आगे

कर ही काया कुतरी, करे तो भजन मे भग ।

जरा सा दुकड़ा डाल के, करो भजन नि २

बढ़ा से रोके रखती है, और समझी हुई बातें समय पर अपने कर्तव्यों का भान जागृत बनाये रखकर दूसरों के दुर्गों का प्रति जाता हुई दृष्टि को रोक कर अतिनिरोक्षण द्वारा खुदकी गन्ती-क्षतिएँ एवं अपूर्णताये समझकर उसे दूर करने की च्छा पैदा करती है

जानना यह ज्ञानका वाच्य रूप है और सदृशना यह ज्ञानका आभ्यन्तर स्वरूप है

विचारों को-मान्यता के साथ जोड़ कर यथार्थ रूपमें जीव-शुद्धि के तत्त्व का कर्तव्य की दिशामें स्थापित करने वास्ते ज्ञानका उपयोग ही वास्तविक सम्पत्ति है.

इस प्रकार के सम्यक् ज्ञान को जीवों में पान का लक्ष्य आज श्रुतज्ञान की यथार्थ आराधना द्वारा पैदा कर लेना जरूरी है

इस ज्ञान को शास्त्रों में "पटम ज्ञानतओ दया" "ज्ञान क्रियानु मूल छे" "ज्ञान सर्वज्ञप्रधानम्" "पहेलु ज्ञान ने पड़ी क्रिया" आदि शब्दों से महत्त्वपूर्ण माना है केरत शास्त्रों की पढ़ाई, शब्द ज्ञान की प्राप्ति, परोपदेशपटुता सिखानवाला एवं वासना-कामनाओं की पूर्णता में किये जानेवाले बुद्धि के दुर्नियोगवाली होन्गियारीवाला व्यावहारिकज्ञान जीवन को कभी उत्तम बना सकता नहीं है—और उस ज्ञानसे जीवन शुद्धि कभी

अक्षर एक न आरहे, पण अभिमान अपार ।

जगमा तेहने जाणवो, सी मूरख सरदार ॥

अथ नदी है—जैसा मरुट स्कंध आपकी परिभाषाओं द्वारा
प्रत्येक भाषाओं को

—का० सु० ५

महा पाद स्वर्गो!!! (२२)

• समस्तार्थी बिना चाहे इतिना ही ज्ञान पाया जाय, पर 'वद' विना
विना मेक (Block) की मोटा का या जीवन की धारा में बह
जा सकता है

• मानव की व्याप्तिपत सभी चीजों में है कि—वद अपनी
समान आश्चर्यकृतियों को बिना किसी का या विरोध के
दिल दृष्टाये पूर्ण कर

• सामाजिक पद्धति की आवश्यकता प्रत्येक पक्ष पर गहरा न
पह मानना ज़रूरी है कि

“इन आवश्यकताओं की प्रष्ट भूमिका में विकार पर बाध-
नामा का आवेग है? या गरीब का निर्धार? या मनवृत्ति है?”

विशेष वास्तवों के आवेग में उठाना आवश्यकताओं का
निर्धार करना जीवन का नुस्खा—आवि के मार्ग पर ही ज्ञान की गीत
भाषा है

का० सु० ६

तब लग जोगी जग गुरु, सब लग रहे उदाम ।

जब दोगी आशा करे, तब जोगी जगदाम ॥

समझदारी किममें ?

० इन्द्रियां क विकारा के पीछे पागल—से बन कर इन्द्रिय एवं मन को तमाम वृत्तियों क संचालक अनंत शक्तिनिधान आत्मा को कर्मों के जाउ में फँसा देने में समझदारी है ? कि:-विवेक एवं सद्बिचार के बल पर जीवन शुद्धि क लिए वृत्तियों का निग्रह करने में समझदारी है ।

० पुराने कर्मों को समभाव से सह्य कर बड़ी अदब क साथ पुरान कर्जों को उतारने के बराबर दुस्वा को हँसते—मुह रोखते न समझदारी है ? कि:-पूर्वकृत अशुभ कर्मों क विषम विपाक के आधार पर आनेवाले दुस्वा से घबरा कर उन्हें दूर करने यास्ते अविवेक और भ्रूढ़ प्रवृत्तिएँ कर क दुस्वा को बुरा कर मानना अशुभ कर्मों के अधिक उपार्जन में समझदारी है ।

० सवाक्य पौदगञ्जिक—गमारिक मुर—वैभव का चरम—सीमा पर रह हुए अनुत्तरवासी देव भी नित मानर—भयकी प्राप्ति क विरति को पा कर जीवत का धन बनान वास्त छटपटाते हैं, वैसे महामूर्ख मानव—भव आदि गलत्यों की साधना के अनुकूल सामपा पा कर सुष्ठु विषय भागों क पीछे जीवन को बरबाद करने में समझदारी है ? कि:-जीवन शुद्धि के लिए ही जानेवाली गलत्यों की साधना न समझदारी है ।

—का० सु० ७

फणु न निपजे एकरी कोणट मन फूलाय ।
कमाइ ने तालु मली, घटनु रखण याय ॥

विद्यार्थों की शुद्धि 'रम्य हो'

इस काम के लिये शुद्ध विचार और पवित्र निष्ठा की आवश्यकता होती है, मन्त्र पद्या और शार्ङ्गमय भावना से कृपित होनेवाले कार्य कभी जीवन का पवित्र बलानन्द उपरान्त नहीं रहते हैं, मनका शक्ति राश्यात् पुण्ये संस्कारा के लक्ष्य विचारधारा को दूषित करता रहता है। मन्त्रमात्रम गालक्ष्याया एव जीवात्पुनः की उक्त्यामें से उठनेवाली शुभशक्तियाँ व आधार पर विचारों को विवेक के प्रकाशसे शुद्ध-निर्मल बनाने का सम्प्रयत्न करना प्रत्येक सुमुख का कर्तव्य है।

आमकन्यास का साधना के मार्ग में प्रवेश होनेवाले भावुक
आमाओं को इसी लिए ज्ञानाग्ने अतर्निरीयण, निमरोप-विचारणा,
अपनी प्रकृतियों की समालोचनात्मक चिन्ता आदि जीवनशुद्धि के
मुख्यतत्वों का आशयकता अत्यधिक बताई है। का० म० ७

राम-चन्द्रप्रसाद

ममार्थ को हर कामनाओं का पूर्ण करने में जैसे कल्पवृक्ष उपयोगी होता है, उस तरह आन्तरिक जीवन-विकास को सफल बनानेवाली तन्मात्र परिस्थिति का मङ्गल मयोजन धर्म की आराधना रूप कल्पवृक्ष से होता है।

एक अवगुणे आपणु, मघां दुगडे चग ।

चपटी हलदर नाम्ता, जेम खीपडीनो रम ॥

गर्म किया पर	सद्वर्त्तन मा-चारों का युक्त बन्
अनग्न रुचि चीज	म महानोंगों का गर्म में
वैराग्य वास्तव धन्य	स्थिती काण एने
रीज गोंग श्रेष्ठ	मात्मन्त्री मष्टि
पात-स्थान-सायाय	आ स्वा-प्रशान्ति
आदि शुभ मष्टि पानी	मपूर्व उपशम-मैरीभाय
संयमी महापुरण की	एचरगी फूल
सोपन ग्रातर	आश्वत्थानि श्रुत लाभों की
मागमार विवेक-	स्पृहा कसे फल
—बुद्धि वाद	माहनाय कर्म का अयोपशम
गमार्थ वृत्ति का	अभिक-वस्तुता का विशम
द्वेष्ट भद्र	एके फल
मोक्ष की प्राप्ति	भामभ्यरूप का विशुद्धानदा
अतिम फल	नुभव फल का मोठा रम

इस तरह धर्म-कल्पवृक्ष के स्वरूप को समझ कर यथायोग्य प्रवृत्तिदाय जीवन को सफल बनाने का लक्ष्य रखना विवेका का कर्तव्य बनै।

—का० सु० ८

अनगुण उपर गुण करे, ए सज्जन अम्याम ।
सुराज जो सलगावीए, आपे भरम सुधारत ॥

मदा याद रखो ! ! ! (२३)

० इसार के समाम काया म लिङ्क लगन म नी प्रवर्ति
होना है, पैसा शक्ति मानाक विकास के रागा म का जाय न.
क याग का साधना सुलभ हो सरना है

० रिक्के, आरम्भेवम इन्द्रियजय गुणानुराग रन अत-
निनीयता द्वारा मुमुक्षु साधक अपनी उन्नति कर पाता है

० समुद्र के गहरे पाना म गिय गह गेट-बड भेंजर एव पहाडा
का टकर से बचान के लिए समुद्र के यात्रा का दीपनम जिनना
उपयोगी होता है, उसना ही गान्धापाआ का पर्यालोचन विवेका
साधक को उपयोग होता है

० हर बात को मोचा ! समझो ! ! और परिस्थितिकी
भूमिका से संतुष्टित करते रहो ! ! ! ता कि पीछे से किसी
पकार का पश्चाताप होने का माका न आवे - का० सु० ०

मदा याद रखो ! ! ! (२४)

० यदि विनय-विवक और यथोचित मयादाम वचन प्रयोग
किया जाय तो दुष्ट शक्तियाँ आदमी के उप स्वभाव को भा नग्न
पनाया जा सकाता है

० विचार और आचार क भाव का गहरी स्तर को जानायोग

चड गतिमा भमता थका, दु-ख अनतानत ।

भोगविया एणे जीवटे, ते जाणे भयवन ॥

प्राप्त करने का मार्ग का अर्थार्थ बढ़ा के शून्य पर भर दी जाय नव ही
मार्ग की शक्ति का अर्थार्थ सत्य पाया जा सकता है

० मज्जा के दिल में जो बान पगपकार बुद्धि में उठता है, यह
ही नगरी के प्राणायाम को मयकर अज्ञान के अभिज्ञान में मज्जा
निरालम्ब समर्थ है

० आचार्य विचारधारा का मुकाबला शास्त्रानुसृत या महा
पुरुषों के जीवन का निरन्तर आदर्श के अनुसार बनाने का माध्यम
करना जरूरी है

-का० सु० १०

विचारों का प्रत्यक्ष

आचार्यकार्य का सफलता के वास्ते जरूरी तदुरस्ती के
दिकान में जानीयोंने सदाचार-प्रत्यक्ष का महत्व माना है, और
आचार्यकार्य में आगे बढ़ने वास्ते भी प्रत्यक्ष का पालन के पक्ष पर
अपसर होना जरूरी नहीं है, परंतु प्रत्यक्ष से मतलब मात्र
जननद्वय का नियम या मैथुन त्याग से नहीं, परंतु वृत्तियों की
आत्मलक्ष्य बनाकर आदर्श सदाचारमय जीवन से है।

इसी तरह प्रिय और समझदारी की तदुरस्ती पान वास्त
अपने विचारों को भी मयमित रखते हुए हर पदार्थ के स्वरूप को

काल अनादि अभ्यास ही, परिणति विषय कथाय ।
नेहनी शक्ति जब हुए, नेह मयाधि कराय ॥

मित्र २ रश्मिकोणी सावन की जादूत म डाल देना चाहिये, अन्यथा
नेकातिक विचारों के बगैरे जान हुए पदार्थों के द्वारा यथार्थ स्वरूप
कभी भी विचारकता प्राप्त नहीं हो पाती है, और तत्त्वचर्च का यथार्थ
प्राप्ति न करनेवालों के अपक्वचर्चसे पैदा होनेवाले ज्ञानों को उदा
अधु विचारों में पदार्थों का अपूर्ण ज्ञान होकर मिथ्या ज्ञान हासिल
होना रहता है

अतः अपने विचारों में आन्तरिक संगतता की वगैरे मयादा
नृणां इत्येव—वेद, काण्ड, भाव, योग, परिस्थिति आदि अनेक
रश्मिकोणीसे हर पदार्थ को समग्रता का अभ्यास करना उचित है

फलतः बीजगत संगतता का बताया हुआ अनकास्तवाद—
स्थापना का असली प्रतिनिधि अपने विचारों में उठ आयागा, और
यथार्थ स्वरूप में विवेक और विचारकता प्राप्त हो पायेगा

—का० सु० ११

मदा याद स्वप्ना' ११' १५,

० नृणां म जहाँ भी देखो वहाँ हर चीज हर समय पर अपना
स्वरूप बदलती रहती है, और विविध परिवर्तनों के गति—शीत प्रवाह
में बदलती रहती है, फिर भी चरना गाड़ी में बैठ हुए का बाहरी पदार्थ
बदलने होने का भय या स्थिर चर में घूमने हुए छत्रा देखने के भय

आ संसार अमारमा, ममता काण्ड अनंत।

असमाधि की आतमा नश्यतो न पाये ॥

की ज्या अज्ञानबन्ध मोहमूढ प्राणी को अगत के पदार्थ स्थिर एवं मोहक मान्त्र्य पड़ते हैं ।

विचारों के आधार पर आचार की भूमिका ब्रह्मा के आदर्श की मय समझत हुए भी उस के व्यावहारिक रूप महापुरुषों के आचार रूप मात्र ही विचारों के जाल के मृगस्थित बना कर जीवन दुःख के अनुकूल बन जाना चाहिये ।

आन्तरिक दृष्टि और परिणाम के नाम पर अपनी योग्यतानुरूप भी यदि बात—व्यावहारिक मर्यादा का पालन न किया जायतो वह केवल ज्ञान मूढता ही है और उसे हटाने वास्तव शास्त्रीय विधि और निर्देश के आधार पर मृगस्थित क्रिया मार्ग के अवलम्बन की आवश्यकता है क्या हम करना है ? और क्या कर रहे हैं ? ये ठाढ़े विचार ही जीवन को उन्नत बनाने के मूल मंत्र हैं ।

• हर प्राणी जिस चीज को पाना चाहता है, उस के पीछे स्वार्थ की भावना न रहे तो आत्मशक्ति की आकर्षण शक्ति से वह चीज अपने आप खींची हुई चली आती है ।

— का० सु० १२

कोई अपूर्व पुण्यही, पाप्यो नर अवतार ।
उत्तम कुल उत्पन्न यो, मासमी ठही सार ॥

मौत में टा क्यों? और किमको?

ममर में देगा जाता है कि—छोटे-बड़े समान प्राणों हर समय विविध प्रवृत्ति के मुख-प्राप्ति पाने को चला करते हैं, और उस को रखाई जाना सदा बार बन्ना रहे ऐसा जानते हैं, परन्तु अपने प्रचारा को जानोये क वचना का मयदा में नडा जमा सकन के प्राण्य धारुदिक दगिन्धिनि का अज्ञान—आगे प्राणया को हमेशा भवभाउ बना देता है

एव एव जानन पाने के बाद मनु के हान में स्वाभाविकता से अतिरिक्त गौर कुछ न हान मा ममर जहा ३ दिल में बटा भागी हर मौनन पेदा न रग है

असंगित म अपन जावन को धमून्य भपति का परमार्थ-पगोप का में रिक्त-पूर्व सदुपराग स्तनगत को मौन न टा कमी नही पाना है,

मान के समय जीवने म क्रिये हुए भयन पपि एव दुश्कथो क भावा परिणाम की विचार-भगए हा शब्दान-मूढ प्राणा चौ क कर मौन में डगन छाता है

अतः मौत में डरने को अपेक्षा कुकर्मों से डरते रहना जरूरी है

—का० सु० १३

पूजा करो गिनराजनी, शुभ ध्याने नज टक।

साहम्भिरछल नहु करो, टाबो पापनी पक॥

की श्या अज्ञानवश मोहमूढ प्राणी को अगत के पदार्थ स्थिर एवं मोहक मादृश पटते हैं।

चिन्ता के आधार पर आचार की भूमिका ब्रह्म के आदर्श की मध्य समझत हुए भी उस का व्यावहारिक रूप महापुरुषों के आचार रूप साथ में विचारों का दाल के सु व्यवस्थित बना कर जीवन शुद्धि के अनुकूल बन जाना चाहिए।

आन्तरिक शुद्धि और परित्याग के नाम पर अपनी यावतानुसंध भी यदि बाध—व्यावहारिक समादा का पालन न किया जायतो वह कलत्र ज्ञान मृदता हो है और उस हटान वास्तु शास्त्रीय विधि और निर्देश के आधार पर मुख्यवर्तित किया मार्ग के अवलम्बन की आवश्यकता है क्या हम करना है? और क्या कर रहे हैं? ये दो विचार ही जीवन को उन्नत बनाने के मूल मंत्र हैं।

• हर प्राणी जिम चीज को पाना चाहता है, उस के पीछे स्वार्थ की भावना न रहे तो आत्मशक्ति की आकर्षण शक्ति से वह चीज अपने आप खींची हुई चली आती है।

का० सु० १२

कोई अपूरव पुण्यही, पाप्यों नर अगार।
उत्तम कुल उपय यों, मापरी लही सार॥

मौत से डर क्यों? और क्यों?

-मौत से डरना ज्ञान है कि -छोटे-बड़े समान प्राणों का समय विविध प्रवृत्ति का है किन्तु -मौत का ही चेहरा धरत है, और उस का स्वर आज्ञा मरना का है जो सब को कहता है, परन्तु अपने विचारों को जानोया कि यक्ष्मा की मरणा म नया जमा यक्ष्मा के कारण वास्तविक परिस्थिति का भयान आज्ञा प्राणीयों को हमेशा भयभीत बना रहता है

अतः एक जीवन पाने के बाद मृत्यु के होने में स्वाभाविकता से प्रतिरक्ति और कुछ न होने का प्रसादा ज्ञान कि जिस में बड़ा भाग हर मौत से पैदा कर रहा है

अमर्त्यता में अपने जीवन की अमूल्य वृत्ति का परमात्र-परोपकार में विवश-पूर्वक मदुपयग करवाना जो मौत का डर किसी नहीं डेता है,

मान के समग्र जीवन में किये हुए भरकर पाप एवं दुष्टियों के भाग्य परिणाम की विचार-गराह ही अज्ञान-मूढ़ प्राणा चौक का जीवन में डरने लगता है

अतः मौत से डरने की अपेक्षा दुष्टियों से डरने रहना जरूरी है

—आ० सु० १३

पूजा करो गिनराजनी, शुभ ज्ञानें प्रद टरु।

माइमिबजल बड करो, राखो पापनो परु ॥

THE WONDERFUL PRESCRIPTION

घ वदरफूल मिस्त्रिप्पन (चम रागिक दवाई का गुग्गुलु)

जगत में जो एक प्राणी दुःख और दर्द में पड़ित है, और उनसे छूटने का चेष्टा करता है, परन्तु दुःख और दर्द का असली स्वभाव अज्ञानवश न समझने के कारण दुनिया के लोग उपर-उपरसे हाँसे, दुःख और दर्द को दफनाने की चेष्टा में ही स्तोष मान लेते हैं, परन्तु द्रव्य-दुःख भा समूह नष्ट नहीं होता है, तो फिर द्रव्य-दुःख को पैदा करनेवाले आनन्दिक विकार और कर्मरूप भावदुःखों को नष्ट करने के लिए उद्योग या सप्रयत्न समारोह आमाभी के नसीब में कहाँ से हो। अतः ज्ञानीयोंन भावदुःखों के विनाश के लिए बताये हुए असली उपाय वाच-जीव के हितार्थ विशेषतः शैलाम्ब यहाँ बताये जाते हैं।

अद्विष्ट दवाई का जादूई गुग्गुलु

सम्यक्त्व पाठ्य	मिश्रित त्रिवेद शक्ति का
	वेस्ट एक्स्ट्रेक्ट
घमैद्वारा का अर्थ	परमात्मज्ञान मिश्र
हेय परित्याग सोल्ट	वासना निगद रूप
	सौभाग्य के
उदारता का आडल	परदोषोपेक्षा का सत्त्व

आराधक भाव पाठ्य

मनमा मरवाईने, मृगस फोगट फलकाय ।

प्रबल सत्ता कर्मनी त्या धार्य कोनू थाय ॥

उपर की समस्त ग्यायों के गुणानुराग—दृष्टि की घेतड में घर्मत्रिया का अ सेवन रूप बास्वार निष्कार गेव नियमित रूपमे मन पर नाचे के ग्या पर आदृ अमर होता है

ग्याध छोटपता का सन्निपात	विषयगमना रूप T B
कदापि का विषमन्तर	परिदा रूप केन्तर
(दाइपाड)	
मान का अजीर्ण	
सर्जना के सिद्धान्त रूप अक्ष	अ.मप्रशसा रूप उमन
की अरुचि	
एकमो और आत्मगौरव रूप	क्रिया चरता रूप (लकवा)
दमन न्युमोनिया	पयाघात

उपर की दवाएँ व अनिश्चित ज्ञान की पेंटेंट दवाइयें भी योग्य ज्ञानी सद्गुरु गुरु के अभिप्रायानुसार काम में लेनी जरूरी है ।

- | | |
|---------------------------------|------------------------------|
| • श्रीजिन ज्ञा फिल्म
(गोली) | • दोष शुद्धि टीसचर |
| • आराधना टेक्नेटम
(टिकरीयें) | • आत्मनिरीक्षण के
इलेक्शन |

मन्मथपट्टि वीर जे. शत्रु घोड़ादिक आट ।
भाठ कमैनी परगना, से सेनानो ठ.ठ ॥

गम निरागम स्थल का गम

य युनिवर्सल स्पिरिटुअल्लियव हॉस्पिटल

मोर्टेड मोर्टेड मेडिकल सुपरी मारा लट विवि यन

आ नोबिल परमात्मा ब्रह्मगणदेव का मंडिर थियसके

प्रेमिटर द १२८८८८ १२८८

श्री विनायकाय नमः माधु

ठि तथ्यचिन्तन हाउस

गाम परिगति स्ट्रीट न ३

(तन्त्र मरेदन

मु. ज्ञानन नगर

राया टिडीश गारु य मोट

सेन्ट्रल गेर्ट (विनाय) —का० मु० १४

अन्तरङ्ग भाजन सामग्री

मनोर क अभी प्राणा आत्मनः म यत्प्रिय ह, जो उसके
कारण वह प्रकाश का उपाधिमा में पैम जाने ह, उन दूर कम दाने
कटि म कटि को निरागम का आ ज्ञानायन अनुभ-भाजन की
सामग्री क एक शुभ भाजन का आयोना आयाम पताया ह निचे
पर कर भयामा ज्ञानया को बचनानुसार जानन बना सकत है

जैसा उची भोजन-सामग्री क बहुत प्रकार जानायो न बताये
है जिसमती कती बहुत यहाँ बनाया जाय है

मरु पदु विगनपु, ए पुष्पलनो धर्म ।

मिति पाके भग नरि रहे, जाओ ग्नीज मर्ष ॥

भात-भोजन की सुदर सामग्री

लापमी-दव, गुरु और र्मे रूप गेहूँ के फाटे में मम्यरत्न रूप धी और गुणानुगत रूप गुड मिला कर बीतराग-परमात्मा के बचनों की सतत विचारणा रूप पृच्छे पर पका कर तैयार की हुई

द्रुपाक-आत्मा के गुणों के सायोज्यमिक विकास रूप द्रुमे प्रभु पूजा, सद्गुरु मंत्र, सायमिक-भक्ति वगैरह योगम, पिस्ता, चांगरी टाट पर ज्ञान-यान रूप अग्निसे पका कर अधिक निर्मल बन हुए आत्मा के गुणों का रत्न हुआ

पूरी-ज्ञानायात्री बनाए हुए जीवन-मर्यादा रूप गेहूँ के आदका मद्रर्तन रूप कगिरू-पिटा बना कर (उससे होनवाली) जीवन शुद्धि रूप आकार देकर मोहनीय कर्म के नश्वर का उत्प्रेड देनेवाले सयम-तप की भट्टी पर श्री तीर्थंकरों की आज्ञा रूप कड़ाई में शुभ यान रूप धी में तली हुई

खीचडी-क्षमा, सरलता, इन्द्रिय वगैरह सद्गुण रूप भान (चाँवल) और सूर्य चाना के साथ मैरी रूप मूँग की दाल की बनी हुई, आराधक भात रूप धी से लचपन, और अनादिफल के

देखत ही उत्पन्न भया, देखत मिलत से होय ।

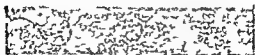
तेणे कारण ए शरीरका, ममत न करणा कोय ॥

मोक्षादि के लिये सस्वस्व रूप शीतार्थ के प्रकाश ज्ञान के
मिष्ट वशी हु आत्मप्रतिष्ठान वृद्ध होनी । कर्म निर्माण
रूप पाना दिया है । यदर्थवत् कर्मवत् ।

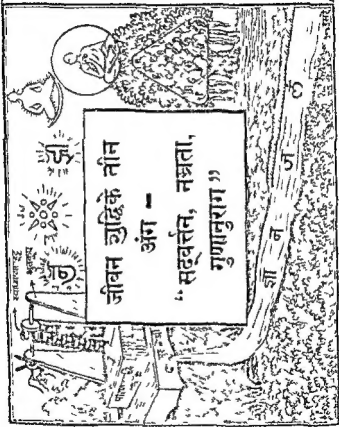
दातृ-वर्त्मन्या रूप तुम्हारे शरीर का दातृ की निरंतर
आवेगन करने लगे नृत्त वृत्त का विधि है उत्पत्ति रूप
दाना में दृष्ट अन्वय रूप भाग्य है । यो विद्या वदन्ता ।
विद्या रूप मन्त्र मन्त्र वृत्त वृत्त वृत्त वृत्त

दान का बीडा-वन्द्यरचन रूप नागात्मक पाना प्रवर्तित
मागीपणा का दातृ, विद्वत् का ज्ञान, पत्नी व श्रीमान् की
मात्री, धनदाता रूप मोक्षार्थी । यो वर्त्मन्या रूप दान
प्रकाश के रूप का दातृ वृत्त वृत्त वृत्त वृत्त

॥ विजयतां विजयामनस ॥



उपनी वस्तु करमी, न रहे व विरपास ।
एव जागी उत्तम-जना, धरे न पुद्गल आस ।



जीवन बुद्धिके तीन
अंग -
“सद्वर्त्तन, नम्रता,
गुणानुराग”

पढिये ! अवश्य पढिये ! !

माला-मेवाड जैसे साधुओं के विहारों में अल्पतावाले प्रदण्डों
आगे-द्वार, तार्थ मंदिर वहाँ-वहाँ, प्रभु प्रतिमा के रूप, चम्पु, टीका,
धार्मिक शिक्षा साहित्य का प्रचार-प्रकाशन, प्रभु पूजन का सामान्य
पौष्य प्रतिरक्षण के उपकरण साधु साध्वी वैशाख, साधर्मिक भक्ति,
उपकरण की पूर्ति, जीवन्मुक्ति आदि अनन्त धार्मिक कार्य के वन पारमा
र्थिक दृष्टि से समीप और सचाट व्यवस्था करती

श्री जैन श्वेतांबर संघ की पेढी

पौपली बाजार इन्दौर (मध्यप्रदेश)

—से पत्रव्यवहार करके पेढी की कार्यवाही से परिचित होएं ! ! !

